

# सरल-जैन-धर्म

क चारों भागों पर लोकमत

17  
 भा० रामचन्द्र जी सघी एम ए विशारद भू० पू०  
 प्रिंसिपल हितकारिणी हाइस्कूल—इनमें गूढ़ से गूढ़ विषय  
 घड़ी सरलता से चित्रोद्धार समझाये गये हैं। जनधर्म जिज्ञानुओं  
 के लिये ये पुस्तक बहुत उपयोगी हैं।

मिस्टर आर जे मकवाना लेखकरार योनाड विद्याला  
 जिराज कालज—इनमें जैनधर्म के गूढ़ विषय इतना सरल और  
 रमाली भाषा में हैं कि इन्हें पढ़कर मर उंचे भी उड़ी दिलचस्पी  
 से समझ गये हैं।

तस्करन्त, सिद्धान्तमहादधि प० माणिकच द्रुजी न्याया  
 चाय प्रधानाध्यापक जम्बू महाविद्यालय महारनपुर—जैन पाठ  
 शालाओं में इनका पठन पाठन अप्रशय हाना चाहिये। आस्तिरना  
 और जैनधर्म के संस्कार इन में कृष्ट २ फर भर हुए हैं। आनन्द  
 भा इनमें श्रेष्ठ धारणापयोगी पुस्तकों का प्रकाशन नहीं हो पाया  
 है। मध्य २ में पाठोपयोगी चित्र दर्ज ता आपने सुवर्ण में  
 गुणाधि कर दी है।

सिद्धान्तशास्त्रा प० नन्हेंलाल जी भू पू प्रधानाध्यापक  
 गापात सिद्धान्त विद्यालय मारेता य प्र अ जैन बालाविग्राम  
 आरा—यदि तमाम विद्यालयों, स्कूलों और पाठशालाओं में ये  
 पुस्तक पठनक्रम में रखदी जाय ता जैन और जनतर बालकों का  
 बड़ा लाभ हो।

याधनुमुदचन्द्रादय आदि ग्रंथों के संग्रहादक  
 प० महेन्द्र कुमार जी न्यायतांध बनारस—मेरी राय में आपका  
 इस दिशा में प्रयत्न अत्यन्त हुआ है। भा० दि० जैन महासभा के  
 ज जनरल सैक्टररी व मंत्री मालना परीक्षालय, जातिभूषण

सरल जैन ग्रन्थमालाका १४ कुसुम

सरल जैन धर्म



चौथा भाग



सम्पादक

भुवनेन्द्र "विश्व"

शुद्धवार तिवासी

— ० —

प्रकाशक

सरल जैन ग्रन्थमाला, जनलपुर ।

सर्वाधिकार स्वरक्षित ।

प्रथमावृत्ति ]

१९३४

{ मूल्य साठे चार पैसे }

## नम्र निवेदन

आज आपके सामने पाठ्यक्रम सरलतासे धान प्राप्त होनेके लिये सरलजैनधम्म नामके चार भाग रखते हुये बड़ी प्रसन्नता है ।

मुझे इनके लिखनेके लिय समाजक अनेक प्रतिष्ठित विद्वानोंने आप्रह किया था । इसीकारण मुझे पेसा करनेके लिये विवश होना पडा । साथ ही जिनमाणीभूषण दाधीर संठ रावजी सखारामजी दाशी, मन्ना भाणुचन्द्र दि० जैत परीक्षालय शोलापुरवाला द्वारा प्रकाशित मराठीमें "जनमाचा पाठमाला" से अधिक प्रास्तावक मिला है । इतना ही नहीं, कुछ पाठ और दो चित्र इतने माहुर मालूम हुये कि मुझे विवश उन्हें ज्यों क त्यों देने पडे । समाजक विविध प्रतिष्ठित लेखकोंके निग्रह या फवितार्ये भी वहाँ २ दनी पडी हैं । इसलिये मैं आप उम्पर सज्जनोका अधिक आभारी हूँ ।

मने इन्हें अपनी समझस वालकाके लिय, अधिकसे अधिक सरल रूपमें रखनेका प्रयत्न किया है । मुझे इस आयोजनमें अनेक विद्वानोंने बडा सहयोग दिया और बालकोंकी हितकामनाकी दृष्टिसे अपनी अनुभवपूर्ण विविध रचनायें भी भेजना महती रूपा की है ।

आप इतने ही से समझलेंगे कि ये चारों भाग कितने महत्वपूर्ण हैं ? इनमें आका धार्मिक चित्रोंके देकर बालकोंको सरलता ही न पर पूराचार्योंको कृतियोंको यथाशक्ति अधिक महत्व देनेका प्रयास किया है ।

मुझे इसके सशोधन करने और अधिक उपयोगी बनानेमें स्याद्वाद्विद्यालय बनारसके प्रधानाध्यापक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी न्यायतीर्थ व न्यायाध्यापक श्रीमान् प० महेन्द्रकुमारजी न्यायतीर्थने बड़ा सहयोग दिया है । अतः आप महाशयोका कृतज्ञ हूँ ।

यदि इनसे बालकोके ज्ञानमें कुछ भी प्रगति मिली तो मैं अपना प्रयास सफल समझूँगा । विद्वानोसे नम्र निवेदन हे कि वे सुधारणीय विषयोसे सूचित करनेका अवश्य कष्ट उठावेंगे, महती कृपा होगी ।

प्रिनीत—

सम्पादक व प्रकाशक

चित्र सूची

	नाम	पृष्ठ
१	तीनलोक	७६
२	जम्बू द्वीप	४३
३	ज्ञानावरण कर्म	७
४	दर्शनावरण "	३५
५	चेदनीय "	१०
६	मेहनीय "	५४
७	आयु "	७०
८	गाम "	६२
९	गात्र "	७२
१०	अंतराय "	५८
११	पाँच अन्धे	४६

## नम्र निवेदन

आज आपके सामने बालकोंके मंगलतासे ज्ञान प्राप्त होनेके लिये सरलजैनधम्म नामक चार भाग रचते हुए बड़ी प्रसन्नता है ।

मुझे आपके लिखाने लिये समाजक अनेक प्रतिष्ठित विद्वानोंने आग्रह किया था । इसीकारण मुझे पसा करनेके लिये विवश होना पडा । साथ ही जिनराणीभूपण दानवीर सेठ रावजी सत्तारामजी दोशी, मंत्री माणिकचन्द्र दि० जैन परीक्षाालय शोलापुरवाला द्वारा प्रकाशित मराठीमें "जनवाचन पाठमाला" से अधिक प्रोत्साहन मिला है । इतना ही नहीं, कुछ पाठ और दो चित्र इतने मनोहर मालूम हुये कि मुझे विवश उन्हें ज्यों के त्यों बन पड़े । समाजक विविध प्रतिष्ठित लेखकोंके निराध या कवितायें भी वहीं २ बना पड़ी हैं । इसलिये मैं आप उदार सज्ज भक्त अधिक आभारी हूँ ।

मैंने उन्हें अपनी समझमें बालकाक लिये, अधिकसे अधिक सरल रूपमें रचनेका प्रयत्न किया है । मुझे इस आयोजनमें अनेक विद्वानोंने बड़ा सहयोग दिया और बालकोंकी हितकामनाकी दृष्टिसे अपनी अनुभवपूर्ण विविध रचनायें भी भेजनेकी महती श्रमा की है ।

आप इतने ही से समझलेंगे कि ये चारों भाग कितने महत्वपूर्ण हैं ? इनमें अनेक धार्मिक चित्रोंके देकर बालकोंके सरलता ही तक पूजाचार्योंकी रूतियाके यथाशक्ति अधिक महत्त्व देनेका प्रयास किया है ।

मुझे इनके सशोधन करने और अधिक उपयोगी बनानेमें स्वाहाद्विद्यालय बनारसके प्रधानाध्यापक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी न्यायतीर्थ व न्यायाध्यापक श्रीमान् प० महेन्द्रकुमारजी न्यायतीर्थने बड़ा सहयोग दिया है । अतः आप महाशयोका कृतज्ञ हूँ ।

यदि इनमें बालकेक घातमें कुछ भी प्रगति मिली तो मैं अपना प्रयास सफल समझूँगा । विद्वानोंसे नम्र निवेदन है कि वे सुधारणीय विषयासे सूचित करनेका अवश्य कष्ट उठावेंगे, महता रूपा हागी ।

निनीत—

सम्पादक व प्रकाशक

चित्र सूची

	नाम	पृष्ठ
१	तीनलोक	७६
२	उम्बू द्वीप	४३
३	घातारण कर्म	७
४	दर्शनावरण "	३५
५	घेदनीय "	१०
६	मोहनीय "	५४
७	आयु "	७०
८	गाम "	६२
९	गोत्र "	७२
१०	अतराय "	५८
११	पाँच अर्थ	४६

# विषयानुक्रमणिका

	पाठ	पृष्ठ
१	अनित्यता	१
२	जाप देग	३
३	गोम्मट स्वामी	५
४	पञ्च परमेष्ठी	८
५	वीरशासन	११
६	जैन धर्म	१३
७	छद्द कर्म	१५
८	ग्यारह प्रतिमार्ये	२०
९	प्रगति गीत	२५
१०	अहिंसा	२६
११	अमर नर	३०
१२	महावीर स्वामी	३०
१३	तीन लोकका वर्णन	४१
१४	स्याद्वाद	४७
१५	कर्म ( धातिया )	५०
१६	जैनधर्म और विज्ञान	५६
१७	उपवास	६२
१८	कर्म ( अघातिया )	६८
१९	वीरोपदेश	७४

## \* शुद्धिपत्र \*

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२३		१- <del>पुष्पि</del>	१- <del>पुष्पि</del>
१४	११	आश्विन	कार्तिक
२४	१४	शेंगुली	शेंजुली
३६	१४	जीवन	जीने
४१	१०	अलाकाकाश	लाकाकाश
४४	१४	पवेत पहाड़	पवेत पड़ा
४४	२१	पजाब से बगाल तक	बगाल या पजाब में
४४	२२	नन्दिय	नदियाँ
४४	२३	बहती हैं,	बहती हुई
४५	१०	चालीस हजार	चालीस
४६	९	कमभूमि की	बर्गभूमिकी सी





नमः श्री परमात्मने

## सरल जैनधर्म



चौथा भाग



पहला पाठ

अनित्यता ❁

[ स्तो०—श्री० शोभाचन्द्र भारिल्ल, 'यायतीर्थ ]

अपर मानकर निज जीवनको पर-भय हाय भुलाया,  
चाँदी-सोनेके डुकडोंमें फूला नहीं समाया ।

देख मूढता यह मानवकी उधर काल मुस्काया,  
अगले पल ले चला यहाँपर नाम निशान न पाया ! ॥१॥

बडे भोर चहुँ ओर ललाई जो भूपर छाई थी,  
नभसे उतर मभा दिनकरकी मध्य दिवस आई थी ।

सन्-या-राग रँगौला मनको तुरत मोहने धाता,  
हाय ! कहीं अथ जन पैला है यह भीषण तम काला ! ॥२॥

पाँच अक्षरोंका मन्त्र —अ सि आ उ सा ।

चार अक्षरोंके मन्त्र —अरहत, असि साह ।

दो अक्षरोंके मन्त्र —र्या ह्रीं, सिद्ध ।

एक अक्षरका मन्त्र :—ओम् ।

ये सब मन्त्र गरमणीवाचक हैं । इनके मियाय अनेक मन्त्र हैं । “ओम्” से पाँचा परमेष्ठिवाक्य ज्ञान पैस होता है यह नीचे स्पष्ट करते हैं ।

सिद्ध परमेष्ठिको अशरीरी और साधुके मुनि भी कहते हैं । इस तरह सब परमेष्ठिवोक पहले अक्षरोंके मिलाकर “ओम्” बन जाता है :—

अरहत	अ	}	आ	}	ओ	}	ओम्
अशरीर	अ						
आचार्य	आ	}	आ				
उपाध्याय	उ						
मुनि	म्						

अथ मालाके १०० दानोंका क्या मतलब है, यह बताते हैं ।

मरभ, समारंभ, आरभ = ३

। मन, वच, तन = ३ × ३ = ९

कृत, कारित, अनुमोदन = ३ × ९ = २७

बोध, भान, माया, लोभ = ४ × २७ = १०८

अर्थात् दोष १०८ तरहसे बन जाते हैं, यह तालिकासे स्पष्ट है । इसलिये मन्त्र १०८ बार जपा जाता है ।

किसी भी मन्त्रके पहले और पीछे 'ओ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान-  
चारित्र्येभ्यो नमः' तीन बार बोलना चाहिये । इसलिये मालाके  
ऊपर तीन दाने और होते हैं ।

जाप स्पष्ट होकर और बैठकर दोनों तरह दी जा सकती है ।  
मालाको जमीनपर नहीं गिरने देना चाहिये अथवा उसका  
अनादर नहीं करना चाहिये ।

#### प्रश्न

- १ जाप देने से क्या लाभ है ?
- २ जाप देने के कौन कौन मन्त्र हैं ?
- ३ 'ओम्' में पञ्चपरमेष्ठीका ज्ञान कैसे होता है ?
- ४ जापमें १०८ दानोंका और तीन दानोंका क्या प्रयोजन है ?
- ५ जाप देनेसे किसको क्या लाभ हुआ ऐसी कोई क्या सुनाओ  
और जाप किस आसनसे देना चाहिये ?

### तीसरा पाठ

## गोमटस्वामी

( ले०—जिनवाणीभूषण सेठ रावजी सरदारामजी टोशी )

मैसूर प्रांतके हासन जिलेमें "चतुराय पट्टन" नामका एक  
तालुका ( परगना ) है । इन तालुकामें श्रवणपेलगुल  
नामकी रस्ती है । इसके दोनों ओर दो सुन्दर पर्व  
भय पहाड़ियाँ हैं, उन दोनोंके बीचमें यह रस्ती ( गाँव ) है ।

है। इस गाँवमें स्थच्छ जलका एक तालाब है। इस तालाबके कारण ही "घेतगुल" नाम पडा।

"बेलगुल" यह कनाटकी भाषाका शब्द है। इसमें "बेल" का अर्थ सफेद और "गोल" का अर्थ तालाब है। श्रवणघतगुलको "गोमटपुर" भी कहते हैं। किसी शिलालेखमें इस "दक्षिणकाशी" भी कहा है। यह सदरन मराठा रेलवेके हासा स्टेशनसे ३० मील और मदारगिरिसे १२ मील है। दोनो स्टेशनोसे मोटर, ताँगा और बैलगाडियाँ किरायेसे मिलती हैं। स्टेशनस श्रवण बेलगुल तक पक्की सडक है। गाँवमें और परंतोमें सब ३० जिनमन्दिर हैं। उनमें सोना चाँदी और हीरा माणिक्यो अनेक मूर्तियाँ हैं। यहाँ श्रीचारुकीर्तिजी महाराज भट्टारकका प्राचीन मठ है। इसमें ताटपत्र पर लिखे हुये अनेक दिगम्बर जैन ग्रन्थ हैं।

गाँवके दक्षिणकी ओरकी पहाडीको दाडुबेट्टा (बडी पहाडी) और उत्तरकी पहाडीको चिक्कबेट्टा (छोटी पहाडी) कहते हैं। बडी पहाडी विन्ध्यगिरि और छोटी पहाडी चद्रगिरि के नामसे प्रसिद्ध है। दोनो पहाडियोके बीचका प्रदेश इतना सुन्दर है कि सारे मेसूर प्रांतमें इतना सुन्दर कोई दूसरा प्रदेश नहीं है। चद्रगिरि पर अनेक शिलालेख और मन्दिर हैं। मौर्यवंशके राजा चद्रगुप्त ने राज्यका परित्याग कर यहीं तपश्चरण किया था। उर्हीने नामसे चद्रगिरि प्रसिद्ध हुआ है। इसी पहाडी पर चद्रवस्ती

नामक मन्दिर चन्द्रगुप्तने ही बनवाया था, ऐसा शिलालेख प्राप्त हुआ है। सुनते हैं कि मद्रवाहुने भी इसी पहाड़ीकी गुफामें तपश्चरण कर शरीरका परित्याग किया है। दक्षिणकी ओर त्रिन्ध्यगिरि पहाड़ी पर श्री १००८ बाहुयली की ५७ फुट उँची अत्यन्त मनोह्र प्रतिमा है। इसी को गोम्मटस्वामी भी



विवरण-कर्मके पाठमें देखें।

कहते हैं। यह मूर्ति बहुत प्राचीन है। इसकी प्रतिष्ठा चामुण्डराय नामक जैन राजाने ईस्वी सन् ६८३ में कराई थी, ऐसा शिलालेखसे मालूम होता है।

इसी प्रतिमाका प्रत्येक वारहवें वर्ष पञ्चामृत महाभिषेक होता है। इस अवसर पर समस्त भारतवर्षके जैनी लांगोकी सख्यामें दर्शनार्थ आते हैं।

इतनी विशालकाय श्रवण पापाणकी प्रतिमा संसारमें दूसरी नहीं है। प्रतिमाका प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता। इस मनोहर्मूर्तिके पवित्र दशनसे नेत्र सफल करने चाहिये।

यह प्रतिमा ससारको त्याग और तपस्याका साक्षात् उपदेश दे रही है।

#### प्रश्न

- १ श्रवणरेलगुल नाम कैसे पदा ? और यह क्यों है ?
- २ चन्द्रगिरि पर्वत क्यों प्रसिद्ध हुआ ?
- ३ गोम्मटस्वामीको मूर्ति किस पर्वत पर है और इसको प्रतिष्ठा क्या हुई ?
- ४ गोम्मटस्वामीकी मूर्तिके विषयमें क्या जानते हो ?
- ५ विन्ध्यगिरि और चन्द्रगिरिको कनाटकमें क्या कहते हैं और क्यों ?

## चौथा पाठ

### पञ्चपरमेष्ठी

परमपद अर्थात् उत्कृष्ट पदमें विराजनवाले परमेष्ठी कहलाते हैं। ये पाँच होते हैं। अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु। इनमें अरहन्त और सिद्ध परमेष्ठी को भगवान्, परमात्मा अथवा देव कहते हैं और आचार्य, उपाध्याय और साधु अथवा गुरु कहलाते हैं।

इहीं पाँचों परमेष्ठियोंको णमोकारमन्त्रमें नमस्कार किया गया है।

तीर्थंकर आदि अरहन्त कहे जाते हैं। इन्होंने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तर्गम्य इन चार घातिया कर्मों का नाश किया और सिद्ध परमेष्ठी आठों कर्मोंका नाश कर देते हैं। इसलिये अरहन्तोंकी अपेक्षा सिद्ध भगवान् अधिक पूज्य होने पर भी अरहन्त भगवान् के द्वारा ससार का साक्षात् उपकार होता है। इसलिये पहले इहींको नमस्कार किया जाता है।

अब सक्षेपसे इनका स्वरूप बताते हैं —

१ अरहन्त—जो ऊपर कहे हुये चार घातिया कर्मोंको नष्टकर चुके हो, अनन्त दर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अन्तर्धीय सहित हो, अस्थि, मज्जा आदि सात धातुरहित परमौदारिक शरीर धारण करते हो और ज में मरण आदि अटारह दोषोंसे रहित हो उन्हें अरहन्त परमेष्ठी कहते हैं।

इनमें ३४ अतिशय ( १० जन्म के, १० ज्ञान के और १४ देवदत्त ), = प्रातिहाय्य और ४ अनन्तचतुष्टय इस प्रकार ४६ गुण होते हैं।

२ सिद्ध —ये ज्ञानावरण आदि आठ कर्मोंका नाश करते हैं, लोक और अलोकको जानने देखनेवाले होते हैं और देहरहित होकर भी पुरुषपद अन्तिम आकारके होते हैं। ये ही सिद्ध परमेष्ठी कहे जाते हैं।



इनमें आठों फर्मोंक अभावसे ये आठ गुण प्रकट हुए हैं:—क्षायिक सम्यक्त्व, आतदशन, अनतज्ञान, अगुरु लघुत्व, अउगाहात्व, सूक्ष्मत्व, अनतपीड्य और भव्यायाध ।

३ आचार्य—दर्शन, ध्यान, धीर्य, चारित्र और तप इन पाँच आचारोंमें जो मुनि स्वयं लीन रह और दूसरोंको इनमें लीन करे उसे आचार्यपरमेष्ठो कहते हैं ।



विवरण-फर्मके पाठम देखें ।

इनके ३६ गुण इस प्रकार हैं—१२ तप १० धम्म, ५ आचार, ६ आवश्यक और ३ गुण ।

४ उपाध्याय—जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र सहित है और सदा धम्मका उपदेश देत है उन्हें

उपाध्याय परमेष्ठी कहते हैं। ये ११ अक्षर और १४ पूर्वोक्तान्तरान्तर रखते हैं। यही २५ गुण इनमें होते हैं।

५ साधु—जो सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान सहित मोक्षमार्गके कारणभूत सम्यक्चारित्र्यको साधता है वह साधुपरमेष्ठी कहलाता है।

इनके २८ मूलगुण होते हैं। ५ महाव्रत, ५ समिति, ५ इन्द्रियत्रिजय, ६ आनश्यक और ७ शेष गुण ।\*

### प्रश्न

- १ परमेष्ठी किसे कहते हैं, ये कितने होते हैं ?
- २ अरहन्तपरमेष्ठी किसे कहते हैं ? चार अरहन्तोंके नाम बताओ ।
- ३ सिद्धपरमेष्ठी किसे कहते हैं ? इन्हें बता सकते हो कहीं रहते हैं ?
- ४ आचार्यपरमेष्ठा किसे कहते हैं ?
- ५ उपाध्यायपरमेष्ठी किसे कहते हैं ?
- ६ साधुपरमेष्ठी किसे कहते हैं ?
- ७ परमेष्ठियोंको नमस्कार और उनकी पूजा करनेमें क्या लाभ है ?

## पाँचवाँ पाठ

### वीर-शासन

( ले०—प० हरिप्रसाद शर्मा 'अप्रियसित' )

जिसकी दया दृष्टिसे हिंसक जन्तु बने थे दया निधान ।

किया असख्यों जीव धारियोंका जिसने जगके कल्याण ॥

\*विशेष जाननेके लिये "इष्टछत्तीसी" देखिये ।

दृष्टा शत्रुघ्नो ज्ञेयः, भजा, जल मुक्त पावनर रोगैः  
 पृथु वीर मिल मोद मनाने मेह मेहिये, वीरि मे ॥  
 दिशानी जिनाविनीको ट्रे डाता जिनने निवानन ।  
 वन्दनीय उम वीर ममुका धन्य धन्य वह मिय शासन ।  
 उच-नीवका भेट पिदारु वीना मपताका सम्बन्ध ।  
 मन्दी नर-न्दी पुष्पाने दयाभावकी नूतन गन्य ॥  
 राग-द्वेष दुर्भाव निाकर हृदय मुक्त सत्र दिवे खिता ।  
 विखरी मानवताकी मालाके मोती सत्र दिवे मिला ॥  
 दिशा प्रदिसाकी देवीको जनि ऊँचा पावन भामन ।  
 वन्दनीय उम वीर ममुका धन्य धन्य वह मिय शासन ।  
 जिनके चरणर उन्नादिर नाना रत्न चढाते थे ।  
 ध्यानमग्न जिनके शरीरने वन-पशु देह मुजाते थे ॥  
 वायु निद्रा-समयमें जिनकी छायाको भवनाते थे ।  
 नाग मूँड रख निरु मुनिवरके चरणोंमें सो जाते थे ॥  
 स्वयं करते थे निकट उठकर शोभाकारका उच्चारण ।  
 वन्दनीय उम वीर ममुका धन्य धन्य वह मिय शासन ॥३॥  
 तिल उठती थी तथा देवभर जिनका निव्य अलौकिक तेज ।  
 प्रकृति विद्या देती थी नीचे हरी मखमली दृष्टा सेज ॥  
 मेघ तान देते थे जिनके सिरपर शीतल छाया छत्र ।  
 दर्शन करने यानो ममुक हाते थे नभपर एकत्र ॥  
 ममु-तन आभा विजली बनकर करती थी नभमें गर्जन ।  
 वन्दनीय उम वीर ममुका धन्य धन्य वह मिय शासन ॥४॥

## छठवाँ पाठ

## जैन-पर्व

(ले०—जिनवाणीभूषण सेठ राजजी सखारामजी दोशी)

जैनी त्योहारको पर्व कहते हैं। प्रत्येक महीनाकी अष्टमी और चतुर्दशी परंतिथि कहलाती है। इनमें श्रावक एकाशन, उपवास अथवा किसी रसका त्याग बगैरह किया करते हैं और दिनभर धर्मध्यानपूर्वक रिताते हैं।

अष्टाहिका पर्व वर्षमें तीन बार मनाया जाता है। आढ़ार्ष, कार्तिक और फाल्गुनकी शुक्ला (सुदी) अष्टमीसे पूर्णिमा (पूनम) तक आठ दिन यह पर्व रहता है। इन आठ दिनोंमें नदीश्वरपूजा होती है। कितने ही श्रावक श्राविकायें आठ दिनका अथवा अपनी शक्तिके अनुसार उपवास, एकाशन अथवा ब्रह्मचर्य आदिका नियम करते हैं। इस पर्वमें, नदीश्वरहीपके वाचन अरुनिम जिनमदिरोमें विराजमान प्रतिमाशोका पूजन, चारो प्रकारके देव आकर करते हैं। यहाँ मनुष्य नहीं पहुँच सकते। इसलिये ये जिनमदिरोमें ही नदीश्वर प्रतिमाकी स्थापना कर पूजन करते हैं। इन दिनोंमें फोल्हापुर, साँगती, तेलगोंव और दक्षिण कर्नाटकमें अच्छा उत्सव मनाते हैं।

पर्युषणपर्व भाद्रपद पञ्चमोसे शुक्ला चतुर्दशी तक दश दिन मनाते हैं। दशलाक्षयिकुपर्ण कहते हैं।

इन दिनोंमें उत्तमक्षमा, माद्वय, आर्जुन, सत्य, शौच, सफाई, तप, त्याग, आक्लिञ्चय और ब्रह्मचर्य इन दश धर्मोंके प्रतिदिन पूजा होती है। प्रतिदिन अभिषेक और तर्पणार्थसूत्रके अर्थ घोंचा जाता है। यह पर्व समस्त भारतवर्षके प्रजाजैनी द्वारा बहुत आनन्द और भक्तिपूर्वक मनाया जाता है। इन दिनोंमें ब्रह्मचर्य, एकाग्रता, उपवास आदि अनेक धर्माचरण क्रिय जाते हैं और हजारोंकी संख्यामें प्रतिदिन उपयोगी संस्थाओंके लिये दान किया जाता है। इसी प्रकार माघ और वैशख सुदी पंचमीसे भी दस दिन तक यह पर्व मनाया जाता है।

अश्विनी नदी अमावास्याके सवेरे पाँच घंटे श्री महावीर स्वामी मोक्ष पधारे। इसी समय थायक, निर्वाण लड्डू चढाते हैं। इस समय देवोंने स्वामी दीपकोस महावीर स्वामीकी पूजा की थी। इसीकारण यह पर्व प्रसिद्ध हुआ। आज महावीर स्वामीकी पूजा और उनका चरित्र पढ़ा जाता है।

महावीर स्वामीकी निर्वाणभूमि पाषाणपुरीमें आज विशेष उत्सव मनाया जाता है।

वैशाख शुक्ल एतोयाको हस्तिनापुरमें (मेरठ) राजा धेर्यासने श्री आदिनाथ भगवान्को इसके रसका आहार कराया था। इसी दिनसे आहारदानकी प्रथा प्रचलित हुई। आज आदिनाथ भगवान्की प्रतिमाका इसके रसमें अभिषेक करते हैं। इस पर्वको अक्षयतृतीया कहते हैं।

ज्येष्ठ शुक्ला पंचमीको श्रुतपञ्चमी कहते हैं। इसीदिन दिगम्बर जैन आचार्योंने शारंगोंकी रचना की थी। इसी लिये श्रुतपञ्चमी कहते हैं। आज मदिरोके ग्रन्थोको, भंडारो और अलमारियोमेंसे बाहर निकाल कर साफ करते हैं। फटे पुगने घेष्टन आदि उदलते ह और ग्रन्थ रगनेकी अलमारी आदिका ठीक करते हैं तथा शास्त्रकी पूजन करते हैं।

चैत्र शुक्ला प्रयादशीको महावीर जयती मनाते ह। आज जैनियोके अतिम तीर्थंकर श्री महावीरस्वामीका जन्म हुआ था। इमतिथी आज उनका जीवनचरित्र पढ़ते ह और उनकी पूजा करत ह तथा जगह ० विद्वान् लोग महावीर-स्वामीक जीवनचरित्रपर प्रकाश डालते ह। इन्होंने सत्कारके प्राणियाका हितके भागका उपदेश दिया है।

## सातवाँ पाठ

### छह कर्म

पालने। तुमको आलोचना पाठ याद है। उसका मतलब भी समझते हो। उममें सवेरेसे शामतक एक गृहस्थसे अनेक प्रकारकी हिंसायें हो जाती ह अथवा गृहस्थसे बहुत अपराध बन पडते ह। ये अपराध आत्माको पवित्र नहीं बनने देते। गृहस्थोकी छह आवश्यक क्रियायें पताते हैं, जिनका आचरण करनेसे गृहस्थ अपना कर्तव्य पाला कर सकता है।

देवपूजा गुरुपास्तिः म्वाध्यायः समयस्तपः ।  
दानं वैति गृहस्याना पट्कर्माणि दिने दिने ॥

अर्थ—जिन द्रव्यकी पूजा करना, गुरुओंकी सेवा करना, स्वाध्याय करना, समयका पालन करना, तपका अभ्यास करना और दान देना ये गृहस्थोके छह आवश्यक कर्म हैं ।

देवपूजा—का अर्थ अरहन्त परमेश्वरी ( भगवान् ) और सिद्ध परमेश्वरीकी पूजा करना है । श्रोत्रपुत्र आदि चोरास तीर्थंकर देव कहलाते हैं । पूजाका अर्थ है, उनमें प्रियमा अन्त गुणोका ध्यान करना और उनके गुणोका प्राप्त करनेकी सदा भाषना करना ।

आजकल वे तीर्थंकर नहीं हैं । इसलिये उनके आगरकी प्रतिमायें बनवाकर उमें तीर्थंकरोके गुणोकी स्थापना करते हैं । स्थापनाका अर्थ तीर्थंकरोके गुणोको प्रतिमामें विद्यमान समझना है । इसलिये जैस साक्षात् तीर्थंकरोके दशनसे आनन्द होता था वीसा ही आनन्द मनाना और आदर स्तुति करना उनकी पूजा कहलाती है । पूजा इत्यसं अर्थात् जल चन्दन आदि आठ द्रव्यासे और अपने पवित्र भाषोस होती है । धावकाका द्रव्यपूजा और मुनियोके ताव पूजाकरनी चाहिये ।

पूजा करनेका कर्मोका नाश हाता है । कर्मोका नाश होनेपर प्रत्येक जीव, मसार पूज्य बन जाता है । यही पूजा करनेका उद्देश्य है ।

जहाँ मन्दिर न हो वहाँ भगवान् की परोक्ष पूजा करे ।  
स्तोत्र पढ़े, सामायिक करे, जाप देवे और शास्त्रका  
स्वाध्याय कर ले ।

(२) गुरुभक्ति—गुरु शब्दका अर्थ आजकलके पढ़ाने वाले  
गुरु ही नहीं किन्तु —

“विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः ।  
ज्ञान-ध्यानतपोरत्नस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥”

अर्थ—जो पाँच इन्द्रियोके वशमें न हो, आरम्भ परिग्रहसे  
रहित हो, ज्ञान और ध्यानमें लीन रहता हो उसे तपस्वी, साधु  
मुनि अथवा गुरु कहते हैं । ऐसे पूज्य गुरुओं की भक्ति  
करना चाहिये । भक्तिका मतलब उनकी सगति करना, उनकी  
धेयावृत्त्य करना और उनके सदुपदेशोंसे लाभ उठाना है ।  
साक्षात् उपकार करने वाले गुरु ही हैं ।

सच्चे गुरु ही तरन-तारन कहलाते हैं । स्वयं ससाररूपी  
समुद्रस पार होते हैं और दूसरोंको उपदेश दे कर पार  
कराते हैं ।

(३) स्वाध्याय—जैनधर्मके स्वरूपको प्रकट करने वाले  
शास्त्रोंको चाँकी पर आदर पूर्वक घिराजमात कर स्वयं पढ़ना  
और दूसरोंको सुनाना स्वाध्याय कहलाता है ।

स्वाध्याय करनेसे ज्ञान बढ़ता है । विषयरूपायोसे  
प्रवृत्ति दृष्टती है । परिणाम निर्मल हो जाते हैं ।



(४) तीव्र—पंचिंद्रियों और मनके पन्नों कल्पना  
 बढ़ाना है। इसमें लिये काममें आन वाली भाग की  
 उपयोग की पशुधारा प्रतिक्रिया लिये करना चाहिये।  
 आन पात्र की शक्ति का एक बार काममें लाइ जा सके, उसे  
 मोग कहते हैं और आ बार २ काममें लाइ जा सके उसे  
 द्व्यभाग कहते हैं। जैसे यत्र सवारा आदि। प्राणिक  
 का रक्षा करना की शक्तिशक्ति करनी चाहिये। यही संकल्प  
 बढ़ाना है। संयमके पालन, संयमके नृत्तवारा हो जान  
 है। संयम मनुष्यगतिमें ही पाता जा सकता है। इसमें  
 जहाँ तक का संयमम रहना चाहिये। जिन कामोंमें इन्द्रियोंका  
 अच्छा मालूम होता है वे सब विषय संसारके बढ़ाने वाले  
 हैं। जैसे गंदे शक्ति और मन्मथल विद्योने, हस्तुषा, मिठार  
 पकवान रसा, इत्र पूल पौगद सूचना, माटक सितमा और  
 वेदयायके ताच पौगद देरता, पश्यायके काने, उच  
 लिकाट सुनता और अच्छा काने पहान पौगदने भाषा राके  
 रहना चाहिये। सच्चे मुनि ऐसा ही करते हैं। हमें भी  
 ऐसा अभ्यास करना चाहिये।

(५) तप—आत्मा की ध्यानरूपी शक्ति में आत्मा के  
 रूपान्तर लप है। इससे आत्मा का फल बढ़ता है। जैसे  
 मही राना, कमराना, बार रस ( मिठाइ, खटाइ, दूध लल,  
 घी आदि ) छोड़ देना, पकान में साना और सामायिक  
 मर्धात् ध्यान लगाता आदि। इसी प्रकार बिय दूध  
 अपराधी का मुद या भगवान् के सामन प्रकट करना,

देव, शास्त्र और गुरु का आदर करना, उनकी सेवा करना, शास्त्रों का मनन करना, मल मूत्र का निजैतुस्थान में छोड़ना और ध्यान करने योग्यसे अन्तरङ्गकी शुद्धि होती है। इन सबसे आत्मा निर्मल बनता है।

(६) दान—अपने और दूसरेके उपकारके लिये, किसी प्रत्युपकार यानी बदलेमें यश योग्यकी इच्छा न कर; आहार, वस्त्र, औषधि और शारंग देना दान कहलाता है। मुनि, व्रती आदि आदि सम्यग्दृष्टी उत्तम पुरुषोको भक्तिपूर्वक दान करना पात्रदान और दीन, दुखी, लुले, राँगडे, षोढ़ी, और असमर्थोंके दान करना कृपादान कहलाता है।

दान देय मन हरप विशेषै। इह नव परमव जस सुख देते।

अर्थात् दान देनेसे मनमें प्रसन्नता होना है। दानसे इस भयमें और दूसरे भयमें यश तथा सुख मिलता है।

#### प्रश्न

- १ गृहस्थोंके अथवा श्रावणोंके कितने दैनिक कर्म होते हैं ? इनके पालनसे क्या लाभ है ?
- २ इन्हें दैनिक कर्म क्यों कहते हैं ? ये कितने होते हैं नाम बताओ।
- ३ देवपूजा किसे कहते हैं ? क्या आजकल देव हैं ? फिर उनकी पूजा कैसे करते हो ?
- ४ स्वाध्यायका क्या अभिप्राय है ? इससे क्या लाभ है ?
- ५ दान किसे कहते हैं ? कृपादानका क्या मतलब है ?

## आठवाँ पाठ

### ग्यारह प्रतिमायें

प्रतिमा व चहनेमर धीजिगमगिहमे मिराजगाग अहम  
भगवान्का ज्ञान दाना है लेविन यहाँ यह भासय महो है ।

प्रतिमाका स्वरूप

संयम अरा जग्यो जहाँ, भोग अगचि परिणाम ।

उदय प्रतिशाको भयो, प्रतिमा ताको नाम ॥

(कविर बनरसी दश)

यहाँ प्रतिमाका अर्थ धातुकी गुणस्थान अथवा पदोस  
है । इहाँका मत भी कहत है । य ग्यारह पाते हैं —

थड़ा कर दत पाले, सामौयिक दोष टाले, पोसा  
मौद सचिक्त्यों त्याग लो घगपरै । रात्रिभुक्ति परिहरै,  
दामवर्ग्य निन धरै, आरम्भको त्याग करै, मन सब फायरै ।  
परिमह फाज टारै अथ अनुमति छारै, सनिमित्त हृंगे टारै,  
आतम लो लायकै । सब एकादश येह, प्रतिमा जु शर्म गेह,  
घारै देशप्रती नेह धर्म उर बदायकै ।

धातु उधति करना हुआ पहलीस दृग्गी, दृग्गीसे  
तीसरी और तीसरीने कैथा इस प्रकार ग्यारहवीं प्रतिमा  
तक बढ़ना है । इससे बाद मुनि अथवा साधु हा सकता है ।

आगेकी प्रतिमाआका धारण करनेवालेने पिछली  
प्रतिमाआका धारण करना आवश्यक है ।

१ दर्शनप्रतिमा—सम्यग्दर्शन सहित अष्टमूल गुण धारण करना और वाईस अभक्ष्य तथा सात व्यसनोक्त त्याग करना दर्शन प्रतिमा है। दर्शनप्रतिमावालेको दार्शनिकश्रावक कहते हैं। यह सदा ससारसे उदासीन, दृढ़ निश्चयवाला और सासारिक फलकी इच्छा नहीं करनेवाला होता है।

२ व्रतप्रतिमा—पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। इन वारह व्रतोंका अतीचाररहित पालन करना व्रत प्रतिमा है। यह प्रतिमाधारी व्रती श्रावक कहलाता है।

३ सामायिक प्रतिमा—प्रतिदिन प्रातः काल, मध्याह्नकाल और सायंकाल दो दो घड़ी विधिपूर्वक अतीचार रहित सामायिक करना सामायिक प्रतिमा कहलाती है।

सामायिककी विधि इस प्रकार है —पहले पूर्व दिशाकी ओर मुँहकर खड़ा होवे। फिर तीन आवर्त और एक नमस्कार कर क्रमसे दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशामें तीन तीन आर्च और एक एक नमस्कार करे। बादमें पूर्व दिशाकी ओर मुँहकर खड़ा हो या बैठे। मन, वचन और कायको शुद्धकर पाँच पापोंका त्याग करना, सामायिक पाठ बोलना, एमोकारमन्त्री जाप देना, भगवान्की परमशान्त मुद्रा तथा चेतना स्वरूप शुद्ध आत्माका एव कर्मोंके उदय रूप रस और धारह भावनाओंका चिंतवन और बादमें खड़ा होकर नौ बार एमोकारमन्त्र पढ़कर नमस्कार करना चाहिये।

सामायिकका उत्कृष्ट समय छह घड़ी मध्यम चार घड़ी और जघन्य दो घड़ी है। चौबीस मिनटकी एक घड़ी होता है।

४ प्रोपचप्रतिमा—प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीको १६ प्रहरतक अनीचार रहित प्रोपधोपवास करना और इस दिन यापार, आरम्भ भोजन ग्राहन आदि सब भोगापभोग सामग्रीका त्यागकर एकात्ममें आध्याय व धर्म-यान करना प्रोपचप्रतिमा है। मध्यम १२ और जघन्य ८ प्रहरका प्रोपच होता है।

५ सच्चित्तत्यागप्रतिमा—फले मूल ( बालू मूली गाजर आदि ) फल शाक, शाखा, कीपल, अकुर, फूल और कद घमौरह नहों खाता सच्चित्तत्याग है।

जीवसहित पदावके सच्चित्त कहते हैं। यह सच्चित्त त्यागप्रतिमा है।

६ रात्रिभोजनात्यागप्रतिमा—मन, धन्य, फायसे और वृत्त कारित अनुमोदनास रातमें सब प्रकारक आहारका त्याग करना रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा है। सूर्यास्त होनेसे दो घड़ी पहले और सूर्यादय होनेके दो घड़ी गदतक आहार का त्याग करना चाहिये।

आहार चार प्रकारका होता है—१ अन्न ( दाल भात आदि ), २ पान ( दूध पानी आदि ), ३ साध ( पेडा वफा आदि ), और ४ लेह ( रयडा आदि )।

इसे "दियामैथुनत्याग" प्रतिमा भी कहते हैं। इसका प्रथम दिनमें मेथुनका त्याग करना है।

रात्रि भोजन त्यागसे जीवोकी हिंसा घचती है और माणियोंपर दयाभाव पैदा होता है।

७ ब्रह्मचर्य्यप्रतिमा—मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदनासे स्त्रीमात्रका त्याग करना ब्रह्मचर्य्यप्रतिमा है।

स्त्रियोकी कथा आदि करना भी ठीक नहीं है। इसे यह मोक्षना चाहिये कि स्त्री शरीर मलका कारण है, मलकी रानि है, इससे मूत्र आदि मल बहता रहता है, दुर्गन्ध भरा है और भयङ्कर है। ऐसे अङ्गका स्पर्श भी नहीं करना चाहिये।

(८) आरम्भत्याग प्रतिमा—हिंसाके कारणस्वरूप नौकरी, पेशी, व्यापार आदि आरम्भो कामोका मन, वचन, काय और कृतकारित अनुमोदनासे त्याग करना आरम्भत्याग प्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारो स्नान, दान और पूजन आदि कर सकना है।

(९) परिग्रहत्याग प्रतिमा—केवल वस्त्र रखकर धन धाय दासो दास आदि दस प्रकारके बाह्य परिग्रहासे मोक्षका त्याग करना परिग्रहत्याग प्रतिमा है। इसे छलकपटसे रहित होना चाहिये और परिग्रहकी इच्छा नहीं रखनी चाहिये।

(१०) अनुमतित्याग प्रतिमा—जो पेशी आदि कामो, धन धान्य आदिमें और विवाह आदि कामोमें रागद्वेष रहित अथवा ममता रहित हो, उसे अनुमतित्याग प्रतिमाधारी कहते हैं।

यह सांसारिक कार्योंकी अनुमोदना भी नहीं कर सकता। यह अपने लिये भोजन आदिके लिये कुछ नहीं कह सकता। उदासीन होकर, प्रायः चैत्याराध अथवा मठ आदिमें रहकर धर्मध्यानमें तत्पर रहता है।

(११) उद्दिष्ट्याग प्रतिमा—जो घर छोड़कर साधुओंके आश्रममें जाकर गुरुओंसे व्रत ग्रहण करे, लंगोट अथवा खगडपत्र ( जो शरीरकी लम्बाई से कुछ कम हो ) धारण करे, भिक्षा लेकर भोजन करे, तप करे और व्रतोंको ग्रहण करे उसे उद्दिष्ट्याग प्रतिमा कहते हैं।

ये, धायकके घरपर अपने लिये तैयार किया हुआ आहार करते हैं इनके नाम्ते नहीं बनाया जाता।

इस प्रतिमाने दो भेद हैं—१ क्षुब्धक य २ पेलक। क्षुब्धकके पास एक चादर रहता है और पेलकके पास लंगोट रहता है। क्षुब्धक बैठकर पात्रमें भोजन करते हैं और पेलक बैठकर अपनी हाथकी अँगुलीमें रखकर भोजन करते हैं। पेलक पिछी रखते और केशलाञ्छ करते हैं और क्षुब्धक नरम वस्त्रसे भूमिको शुद्ध करते हैं। आचार्यमहाराज, पेलक और मुनिका व्रत ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यको देते हैं।

पहली प्रतिमाने छठी प्रतिमातकक जघपथायक, सातवींसे नवमी तक मध्यम थायक और दसवीं तथा ग्यारहवीं प्रतिमाके धारक उत्तम थायक कहलाते हैं।

प्रश्न

१ प्रतिमा किसे कहते हैं ?

- २ प्रतिमायें कितनी होती हैं और उनमें क्या भेद है ?
- ३ प्रत्येक प्रतिमाका स्वरूप बताओ ।
- ४ पेलक और धुलक कौनसी प्रतिमा धारी होते हैं ? इनमें क्या अन्तर है ?
- ५ रात्रिभोजन त्यागका दूसरा नाम क्या है ?
- ६ ब्रह्मचर्य प्रतिमावाला सचित्तत्यागी होगा या नहीं ?
- ७ सामायिक करनेकी विधि क्या है ? उसमें क्या विचारना चाहिये और कितने समय तक करनी चाहिये ?

---

## नवमा पाठ

### प्रगति-गीत\*

( श्रीमती हंसकुमारी तिचारी )

आगे चल, चल, आगे चल,

शका भय सर त्यागे चल ।

चल, आगे चल ॥

बाधायें जो अटी खडी हों, मगमें, सारे अग जगमे ।

रुठिनाई उठी खडी हो, अवसाद भरा रग-रगमें ॥

सकल्य हिमालयका हो, तू दृढ़ रह, भय ! आगे, चल ।

चल, आगे चल ॥ १ ॥



पग-पगमें प्राण हरा हो, उत्साह न म्लान जरा हो ।  
हो लगन लगी आगे की, स्वरमें जय गान भरा हो ॥  
फाँटे हों, आग बिछी हो, हँसदे जीवन । आगे चल ।

चल, आगे चल ॥ २ ॥

दे निछा मरण निज अचल, मत तफ़्फ़ा चरण हो चचल ।  
विस्मित हो विश्व रिघाता, सृष्टि हो पल पल टल मल ॥  
हुँहमें हो गीत, अधर पर, मुस्कान कदम आगे चल ।

चल, आगे चल ॥ ३ ॥

---

दसवाँ पाठ

अहिंसा

(सिद्धांतरत्न प० न हँलाल जी शास्त्री)

धर्मका लक्षण अहिंसा है । भारतवर्षमें जिनन मत प्रचलित  
हैं उन सयने अहिंसाधर्मके किसी ७ किसी रूपमें अवश्य  
स्वीकार किया है कि तु जैनमतने अहिंसामा माझापाङ्क  
विशद वर्णन कर उसे पूणरूपस अपनाया ह । अहिंसा क्या  
है, इसको समझनेके पहिले उसके प्रतिपक्षी हिंसाके निम्न  
प्रकार समझ लेना आवश्यक है । प्रमाद और कपायस  
अपन घ दूसरे जीवोक प्राणोक घात करना घ दिलको  
दुखाना हिंसा है । जो द्रव्यहिंसा और भारहिंसाके भेदसे दो

तरह की है। किसी जीवको जानसे मार देना द्रव्यहिंसा है। जिस तरह हमको अपने प्राण प्यारे हैं उसी तरह ससारके सब जीवोंको अपने ० प्राण प्यारे ह। इसलिये अपने प्राणोंके समान ही दूसरे जीवोंके प्राणोंको जानकर, कभी किसी जीवका घात नहीं करना द्रव्यहिंसा है। गृहस्थ सकल्पीहिंसाका त्यागी होता है। गृहस्थको मन उचन कायसे किसी जीवको मारनेका इरादा नहीं करना चाहिये, नहीं तो उसे भारी पाप लगता है। जैसे धीवर, घरसे चलकर मामें यह विचार करता है कि मैं आज तालाबमेंसे ग्युं मछलियाँ मारूँगा। धीवर तालाब पर पहुँचकर ग्यार ० जाल पानीमें डालता है किंतु उसके जालमें सुबहसे शामतक एक भी मछली नहीं आती है। फिर भी धीवरको बहुत भारी हिंसाका पाप लगता है। क्योंकि वह पहिलेमे ही अनेक मछलियोंके मारनेका इरादा कर चुका है। इसीका नाम सकल्पीहिंसा है। गृहस्थको सकल्पीहिंसाके त्यागके साथ २ विरोधी, उद्योगी और आरम्भीहिंसा के उचारका भी पूर्णध्यान रखना चाहिये। शेर, सर्प, विच्छू, ततइया आदि जीवोंके ऊपर भी अन्यजीवोंके समान दयाका भाव होना चाहिये। जो निर्दया इन जीवोंको देखते ही इनको जानसे मार डालने ह वे बड़ा भारी पाप करते हैं।

जिसका जो स्वभाव है वह उससे कभी नहीं जा सकता है। जैसे अग्निमें उष्णस्वभाव। अत यह जानकर कि ततइया या विच्छू स्वभाव वैसा ही है, कभी उनका

## ग्यारहवाँ पाठ

### ⊙ अमर-नर

( स्तो०—श्री० सत्यभक्त )

विपदाओंको कुचल कुचल जो, कर्म मार्ग पर चलते है ।  
 बाधाओंको देग देख जो, मन्द मन्द मुसकाते है ॥१॥  
 जननी जन्मभूमि हित जो निज, जीवन पुण्य चढाते है ।  
 इस जगमें ये ही नर अपना, नाम अमर कर जाते हैं ॥२॥  
 सुमन सदृश पशु सौरभ उनका, इस जगम छा जाता है ।  
 इतिहासोंमें, स्वर्णाक्षरमें, उनका नाम लिखाता है ॥३॥

\* \* \* \*

आओ मिटादें पाप जगके प्रेमही पूजा करें ।

मिट जाँय हम मिट्टी वनें, पर विश्व की विपदा हरे ॥४॥

## बारहवाँ पाठ

### महावीर-स्वामी

( श्री० टी० मल० घट्टानी )

भगवान् महावीरकी स्मृतिके लिये सैनिका महीना पुनः  
 गिना जाता है । २५०० वर्ष पूर्व भगवान्ने हस्तीनासमें  
 पटनाके पास अत्रतार धारण किया

\* विशोखे उद्धृत

कि पटना नगर अशोक और गुरु गोविन्द सिंह के कारण भी प्रसिद्ध है। इस मासमें शुक्लपक्षकी त्रयोदशीके दिन इनका जन्म हुआ था, यही इनके जन्म-उत्सवका पवित्र दिन है। भारतके नवयुवके ! स्मरण रखो, तुमारी भारतमाताने अपनी कोसमें इस प्रकारके कई समर्थ महावीर धीरोको जन्म दिया है। भाग्य गरीब है, परन्तु मानवी स्रोतका मूल कारण भारत, अमंग भी है। उसके लिये पुत्र क्या नहीं कर सकते ? अगर उनमें करनेकी कुछ इच्छा हो। क्या इसी भारतने युगयुगान्तरोंमें कितने ही ऐसे आध्यात्मिक पुरुष पैदा नहीं किये ? आज जिस महावीरका उत्सव यह भारत मना रहा है केवल उही हमारे इतिहासका देदीप्यमान नक्षत्र नहीं है और भी कई महावीर पिछले युगोंसे भारतको अलङ्घन कर चुके हैं। वे आध्यात्मिक शक्तियाँ—उन्होंने भी भारतभूमिको पवित्र किया है। उन्होंने भारतको अपनी शक्तियाँ देकर वनी और सम्पन्न भी बनाया है।

महावीरका शब्दार्थ 'अत्यन्त वीर' है। उही हमारे इतिहासकी अलौकिक शक्ति थे। वे वीर अहंकारी और हिंसक नहीं थे, किन्तु तप, प्रेम और स्वच्छताकी प्रतिमूर्ति थे।

रशियाके तपस्वी टाल्स्टायने एक जगह कहा है जिस प्रकार आग आगको नहीं बुझाती, इसी प्रकार पाप पापको शांत नहीं कर सकते। इसी ऋषिकी शिक्षाका सूत्र कि घुराई मत बढ़ाओ, हमें महात्मा ईसाकी वाणीमें मिलता है। कि तु उनसे भी - २ साल पहिले भारतके दो

भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीरने इसी अहिंसाकी घोषणा की थी। जैनी लोग उसी अतिम शक्ति महावीरके भगवान् कह कर पूजते हैं। वे उन्हें 'तीर्थंकर' के नामसे भी पूजते हैं। जिसको मं 'पूर्ण' कहकर पुकारता हूँ। महावीर 'चौवीसवें' तीर्थंकर माने जाते हैं। पहले तीर्थंकरका नाम ऋषभनाथ या आदिनाथ है। जिन्होंने अयोध्यामें शरीर धारण किया पर कैलाश पर्वत पर तप करके सिद्धि प्राप्त की। वे ही जैनधर्मके आदिप्रवर्तक थे। इन चौबीसवें तीर्थंकर भगवान् महावीरने वैश्वधर्मसे भी प्राचीन जैनधर्मका शाखनाद करते हुए उसको पुनः स्वीकृत किया।

मुझे भगवान् महावीरने जिस कारण सबसे अधिक प्रभावित किया, वह उनकी पक्कात शान्ति और अद्भुत सौन्दर्य था। उनकी समकालीनता हमें भगवान् बुद्ध जैसा त्याग कैसे तप, वेसे विश्वप्रेमकी धारधार याद दिलाते हैं।

वे इन्हासे पांच सौ तियानवें वर्ष पूर्व विहारके एक गावमें हुए थे। उनके पिताका नाम सिद्धार्थ था। वे क्षत्रिय थे। उनकी माता राणी त्रिशता अथवा प्रियफारिणी थीं जो बलियाँ प्रजातंत्रके अगुआ चेटककी पुत्री थीं। महावीर घातकालमें शिक्षाके लिए पाठशालाम भेज गये थे। किन्तु अध्यापकोने देखा कि बालक महावीरका अध्यापकोकी आवश्यकता नहीं है। उनके भीतर अध्यापकोने जिस विद्वत्ताके देखा उसे देख कर वे दग रह गये। उन्होंने

समझा कि इस बालकको कोई शिक्षा नहीं दे सकता व भगवान् बुद्धकी तरह वे ससारसे वीतराग होनेकी प्रतीक्षामें थे। वे जैसे तैसे अट्ठाइस साल तक अपने परिवारमें रहे। इसी बीचमें उनके माता पिताका स्वर्गवास हो गया। उस समय उन्होंने सत्यास लेना ही उचित समझा।

सत्यासकी आज्ञा लेनेके लिये वे अपने बड़े भाईके पास पहुँचे, कि तु उनके भाईने जगत् दिया ठहरो, अभी माता पिताके प्रियोगके घाव हरे हैं। इस तरह उन्होंने दो साल तक और प्रतीक्षा की। अत्र महात्मा ईसाकी तरह उनकी उम्र तीस सालकी थी। उन्होंने भगवान् बुद्धकी तरह सत्यास लेकर तप करनेका यही ठीक अपसर समझा। उन्होंने अपना धन गरीबोंमें बाँट दिया और भाईको राज्य सौंपकर एक दिन अपना परिवार छोड़कर वे ससारत्यागी हो गये। उनका समय तप और प्रार्थनामें बीतने लगा। भगवान् बुद्धके सिद्धि प्राप्त करनेमें छह साल लगे थे परन्तु महावीरने बारह वर्ष तक घोर तप किया तथा सिद्धि प्राप्त की। उन्होंने जूम्भक नगरके पास अञ्जुकुला नदीके किनारे सिद्धि प्राप्त की और वे जैन धर्मके अनुन्मार तीर्थंकर और सर्वज्ञ हो गये। “कैवल्य” मिल गया। इसी पदवीको जैन ग्रन्थ ‘केवलिन’ कहकर पुकारते हैं।

तत्र बुद्धके अनुसार वे भी उपदेश देनेको तत्पर हो गये। रागातार तीस सालतक उन्होंने जगह जगह उपदेश दिये।

बंगाल और बिहार उनके उपदेशके प्रधान स्थान थे। उन्होंने उन बसन्ध जातियोंमें भी उपदेश दिया जिन्होंने उनके साथ दुर्व्यवहार किया। वे अपने धर्मके प्रचारार्थ धायस्ती और हिमालय भी गये। वे दुःखद्वेषमें भी सदा शांत हो रहे। जहाँ वे उपदेशक थे वहाँ शासक भी थे। उनके ग्यारह प्रमुख शिष्य थे। चार हजार साधुओंके सिवा यह शृङ्खल भी उनके मतमें दीक्षित हुए। ब्राह्मण अर्वाह्मण सभी उनके धर्ममें दीप्तिन हुए। उन्हें जातिपाँनिका कोई ध्यान न था। और इसासे ५२६ वर्ष पूर्व दिवालीके दिन उन्होंने ७२ सालकी उमरमें पावापुरी (बिहार) में अपना शरीर छोड़ दिया ? भगवान् महाशरीरका जोरन किनना सु र था ! धमी क्षत्रिय घरानेमें जन्म लेकर भी उन्होंने संसार त्याग दिया। उ हाने अपना धन गरीबोंमें बाँट दिया और तप करके धनमें धले गये। मनुष्यके एक मुण्डने उनपर प्रहार भी किया, परन्तु वे शांत थे।

धनसे तप करके तौटने पर उन्होंने अपने धर्मके उपदेश दिये। बहुतसे लोग उनपर हँसते थे। उनके उपदेशमें विघ्न डालते थे, परन्तु वे शांत थे।

उनके एक शिष्यने उन्हें निर्वासित किया और उन्हें बदनाम किया परन्तु वे शांत रहे। वे धस्तुत महाशरीर थे, उन्होंने अपनी शक्तिको शीलमय एवं धलवान् बनाया। ध शीलके अरतार थे। उनके जीवनमें उनके अनुयायियों

पर विशेष प्रभाव पडा। उन्होंने भगवान्‌का सदेश दूर-दूर तक पहुँचा दिया। कहा जाता है कि ग्रीक दार्शनिक विद्वान् पीरोने जिमने।सोफिस्ट नामक विद्वान्‌से दर्शनोका अभ्यास किया, जो जैन योगी थे।

रचनमें वे 'धीर' नामसे पुकारे जाते थे। उनका नाम वर्धमान और समति भी था। महीवार उनका पीछेका



विवरण कर्मके पाठमें देखें।

नाम है। यह उनका नाम इस तरह पडा कि एकवार ये अपने कुछ बालमित्रोके साथ खेल रहे थे। उस समय एक बडा काला साँप कहींसे निकल आया और फन निवाल पर खड़ा हो गया। भगवान्‌ने एक दम जाकर उसके फन पर बैठ रखकर उसे हथोला किया।



मेरे लिये यह कहानी एक दृष्टांत है। जबकि भगवान्ने  
 यस्मिन् सर्वेषु विपरीतेषु बुध्दुःखं कालं ध्यात्वा । यं शश्वमुप  
 बद्धे धीरं शौचं इन्द्रियजयी यः । उर्ध्वं च रागद्वेष पर  
 विजय पादः । उन्ने जीवन्ना न्यस्य धीयच्छा, तद्वरणा  
 या । आ सवते यदा शक्तिमय जीवा । तन्मैत्र  
 भारत भा येने हा महानुरां, महात्माकांश आदता है।  
 धन और साधारण ज्ञान कुछ भी साम नहीं है मरण।  
 इस समय भी एस हा महापुरुषकी आयुष्यका है जो  
 मनुष्यत्वकी रक्षा कर सके, जो निर्भीक होकर स्वतंत्रताके  
 लिये लड़ सके। भगवान् महावीरकी धारता उन्ने  
 जीवन्ने, उन्ना शिक्षास स्पष्ट भगवती है। जैसे उनका  
 जाया शक्तिशाली और आत्मसंयमका जीवन था वैसे ही  
 उनका शिक्षा था। उनकी इस शिक्षाके कि—“तमाम  
 प्राणिवान्ने अपना दीना समभो और सिन्धो मत मनाथो।”  
 स्पष्ट रूपसे हा पदार्थ है पर विधि और मूल्य निषेध  
 विधि है एकताकी शिक्षा, और निषेध है किन्हीको न  
 सनाता। तमाम प्राणिवान्ने अपने जैसे समभनेम हा  
 दूसरा भाव स्पष्ट हो जाता है।

भगवान् महावीरके जीवन और शिक्षास तीनों धारों मालूम  
 होती हैं—

(१) ब्रह्मचर्य (२) अनेकान्ना याद् और स्याद् याद्।  
 भगवान्ने बतलाया है कि एक अन्नसे संनारकी सम्पूर्ण  
 सच्चाई प्रतीत नहीं हो सकती। क्योंकि सत्य अनात है। मुझे

इस समयमें एक प्रसिद्ध दार्शनिक आस्टाइन (Einstein) का 'सम्यग्भ्रमा' (Doctrine of relativity) याद आ रहा है। हम खगोल सिद्धान्तके नामपर पिछले दिनों बहुत कुछ दुःख उगाया है। इस समय आवश्यकता इस बात की है कि एक नरयुवक, भगवान् महावीरके इस उपदेशको लेकर सुदूर ग्रामों और नगरोंमें पारस्परिक सहानुभूति और प्रेमका प्रचार करें। सिद्धांतों हमेशा हममें लड़ाई भगडे और विभाग पैदा किये हैं और हम लोग आध्यात्मिक जीवनके लिये ये विचारको लेकर देशमें स्वदेशप्रेम की लहर पैदा कर दें। एक नई राष्ट्रीयताको जागृत कर दें। क्योंकि 'सम्यग्भ्रम' है। धर्मका आशय भी लड़ाई भगडे पैदा करना नहीं बल्कि मनुष्यता और प्रेम पैदा करना है।

### (३) अहिंसा —

इसका मतलब निकम्मापन और कायरता हरगिज नहीं है। घस्तुत यह सबसे बड़ा गुण है, सबसे बड़ी शक्ति और सबसे बड़ा धर्म। यह शांतिका बल है जो लडाइयोंके हृदयमें भी शांति पैदा करता है।

यूरोपके लोगोंने बहुत समय तक हिंसाको अपनाया, और हिन्दुस्तानके लोगोंमें भी कुछ कुछ यही भावना दिखाई देती है। एक फ्रांसीसीने अपनी एक मिलकुल नई किताबमें लिखा है कि "हम जर्मनीका नाश चाहते हैं।" इसी प्रकार एक जर्मनने "यूरोपके दानफण्डमें सहायता..."

प्रार्थना की गई तो उसने कहा कि, मैं सम्पूर्ण योरोपका नाथ, देखना चाहता हूँ, लेकिन यह बात मुझे बड़ा दुःख देती है। मुझे ऐसे समयमें भारतके उन श्रद्धियाकी याद आती है और विशेषकर भगवान् महावीरकी, जिन्होंने पच्चीस सौ वर्ष पूर्व एक महान् संदेश दिया था कि 'अपने आपको भूलकर विद्वेषपर विजय पाओ।'

मुझे इतिहासके पन्नोंमें घग्गादी, युद्ध, धार्मिक अत्याचार अब भी मालूम होते हैं, उनमें किसीके भी सफलता नहीं मिली। बल और घमण्ड सरासे हमारी उन्नतिके रास्तेमें चिह्नाने गहे हैं। हमने अहिंसाका अपने जीवनोंमें कभी नहीं अपनाया। क्या हमारे भाजरा, हमारे व्यापार और हमारे सामाजिक जीवनमें अहिंसाके यजाय हिंसाका ही अधिक भाग नहीं है? आजकल की हमारी राजनीतिमें क्या है? विषयोसे मित्रता ?

मैं एक बात बहुत ही दृढ़तासे देख रहा हूँ कि हमारे राष्ट्रीय आ-दाताका, मनुष्य बनाने वाली आत्मिक शक्तियोसे सम्बंध होना चाहिये। और हिंसाका नाम भी शेष न रहे। हमें भाइचारेकी सम्भ्यताका निमाण करना होगा। घृण हमें सहायता दे नहीं सकती। आज जातियाँ घातका दुःखसे युक्त दानेमें पहा रही हैं। हमें अपने राष्ट्रीय जीवनोंमें श्वरके अपने पास बुलाना होगा। इसी आध्यात्मिक शक्तिसे आधारपर हम मनुष्यत्वका पुनर्निर्माण कर सकेंगे। अगर

मुझसे पूछा जाय कि भारतकी आत्मा क्या है ? तो मैं एक क्षणमें कहूँगा कि वह अहिंसा है । भारतकी सनातन खोज अहिंसाकी तलाशमें ही थी । जिसने, मन, वचन और कर्मसे हमारे जीवनमें प्रवेश किया । भारतीय अहिंसाके सिद्धान्तने सम्पूर्ण विश्वको अपनी ओर आकृष्ट किया है । उसने औपनिवेशिक राज्यों और विजयोंके स्वप्न कभी नहीं देखे । यह दूसरोंको अजनबी समझने वाले ईर्ष्यालु चीन और जापानका भी गुरु हो चुका है । भारतका राष्ट्र कभी युद्ध प्रिय न बना । उसके मनुष्यत्वके प्रति, प्रेमने उसे सदा ही साम्राज्य लिप्सासे बचाया है । यह एक बहुत बड़ी राजनैतिक सच्चाई थी, जिसपर हमारा ध्यान भगवान् बुद्धने आकृष्ट किया है । “विजयी और विजित सदा ही दुखी रहते हैं,” विजित इसलिये कि उनपर अत्याचार हुये और जीवन वाले इसलिये डरते हैं कि विजित जातियाँ फिर उठकर उनके विजय घोषको भस्मसात् न कर दें । भारतने कभी दूसरे देशोंको गुलाम नहीं बनाया । दूसरोंको दास बनाना बड़ी भारी हिंसा है ।

यूरोप सदा ही मारकाटके पीछे दौड़ता रहा है । और उसकी संस्कृतिका बल सदासे ही इसे स्वतन्त्रताको उपयोगी समझना रहा है । परन्तु याद रहे—साधनाके बिना स्वतन्त्रता नहीं मिलती । और बिना नैतिक संरक्षणके भी यूरोप राज्य और राष्ट्रके अतिरिक्त किसी नियमको नहीं मानता शायद २००० ई. में ही मची है । यही पश्चिमी

सृष्टि है। और इसीलिये ससारव्यापी विश्वयुद्ध हैं। जो अभी तक समाप्त नहीं होते। भारतीय नवयुग भी अहिंसाका खन्दहकी दृष्टिसे देखते हैं। ये स्वभावतः इस अपमानजनक अरुस्थाको घूर कर देख रहे हैं। जिसमें किसी शक्तिशाली और नशोले राज्यने उनके अपमानमें वृद्धि की है। लेकिन स्वतंत्रताके लिये युद्धका छिपा हुआ रहस्य आत्मत्याग, सत्तापका नियमन है। मेरा तो विश्वास है कि अहिंसा कमजोरी नहीं है। सच्ची अहिंसामें मृत्युका भी भय नहीं, किन्तु मनुष्यताके लिये आदर है। मेरा तो पूर्ण विश्वास है जैसा शास्त्र कहते हैं—“अहिंसा यम है, त्याग है, जीवनको विविध धाराओंमें सबसे बड़ी शक्ति है।”

भगवान् महावीरकी बहुतसी सूक्तियोंमें एक यह भी है कि “तुम ही अपने मित्र हो।” हा, और तुम ही अपने शत्रु हो। तुम अपने मित्र बनो। शत्रु मत बनो। हम सब लोग आनन्दका भोजनमें हैं। दूसरोंको भी सुखी हाने दो। यह नियम है जो दूसरोंका सुखी करता है वह स्वयं सुखी होता है। जो दूसरोंको हानि पहुँचाता है उसको स्वयं हानि होती है। इसलिये अपने प्रतिद्वन्द्वीके जीवनमें अहिंसाका यत्न करो और संसारमें प्रेमके प्रकाशको फैलाओ।

## तेरहवाँ पाठ

## तीन लोकका वर्णन

( सं०—सिद्धान्तमहोदधि प० माणिकचन्द्रजी यायाचार्य )

इस चगचर जगतमें सबसे बड़ा पदार्थ अलोकाकाश है, जो कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊर्ध्व, अध्र, इन छहो देशांशमें अनन्तानन्त राजू फैला हुआ बर्फीके समान घन शरीर है, आकाशको हम इन्द्रियासे नहीं जान सकते हैं। ई सर्वशक्ति द्वारा ब्रह्मे गये आगम या युक्तियान्ते अतीन्द्रिय दार्थोंका परिचय कर लिया जाता है। उस सब और आगे आकाशके ठीक नीचे अलोकाकाश है, जो कि अनादिकालसे अनन्तकालतक अदृशिम है। किसीके द्वारा बनाया गया नहीं है और न किसी समयमें लोककी सृष्टि होती है और न प्रलय ही होता है। अतः जीव और अजीव पदार्थोंसे बनाया गया हुआ यह लोक अनादि निरन है।

जात्र, पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश, और काल इन छह ब्रह्मोंके समुदायको लोक कहते हैं। इस लोकसे त्रिरे हुये मध्यवर्ती आकाशको लोकाकाश कहते हैं।

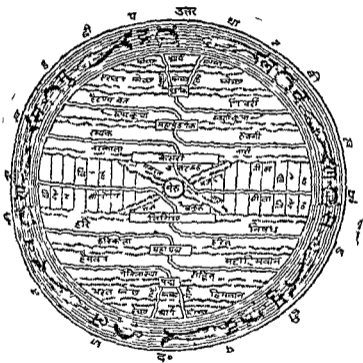
यह लोक पूर्व पश्चिम, दिशांमें नीचे सात राजू है, क्रमसे घटता हुआ ऊपर आकर एक राजू चौड़ा रह गया है। और क्रमसे बढ़ता हुआ साठेदश राजू ऊपर जाकर, पाँच राजू चौड़ा हो गया है, पुन चौदह राजू ऊपर क्रमसे घटता हुआ एक रह गया है।

लम्बाई, दक्षिण और उत्तर सब जगह सात राजू है, सब; तीन सौ तेतालीस घनराजू प्रमाण यह लोक है, लोकके ठीक; बीचमें एक राजू चौड़ी, एक राजू लम्बी और चौदह राजू ऊँची प्रसनाली पड़ी हुई है।

यह लोक साठ हजार योजन मोटे तीन घातयलयो ( हवाआ ) पर डटा हुआ है।

अधोलोक, मध्यलोक, और ऊर्ध्वलोक ये तीन भेद लोकावाशके किये गये हैं। लोकके ठीक बीचमें एक लाख चालीस योजन ऊँचा सुदर्शन मेरु तामका, पर्वत अनादि कालमे प्रतिष्ठित है, इस पर्वतके नीचेके सात राजू भागको अधोलोक कहते हैं। और कुछ कम सात राजू इससे ऊपर ऊर्ध्वलोक समझा जाता है तथा मेरु वरावर ऊँचा, नीचा, और तिरछा असंग्यात योजनो लम्बा मध्यलोक है। अधोलोकमें सबसे नीचे एक राजूतक वादर निगोद जीव भरे हुए हैं और उससे ऊपर छह राजूअर्धमें सात पृथ्वियाँ हैं, जिनमें पापकर्मोंके फलना भोगनेवाल असख्यात तारकी जीव दुःखयातनाओंके सह रहे हैं। पाँच स्थावरकायिक जीव, लोकमें सबत्र पाये जाते हैं। जिस मध्यलोकमें हम लोग ठहरे हुये हैं उसका ठीक आकार लम्बे काठके तपताके समान है अर्थात् सात राजू लम्बा एक राजू चौड़ा और एक लाख चालीस हजार योजन ऊँचा यह मध्यलोक है। जिस रक्षाप्रमा पृथ्वीपर हम रहते हैं वह सात राजू लम्बी, एक राजू चौड़ी, एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है।

यदि हम इसमें की प्रसनाली का ही नक्शा खींचें तो वह एक राजू लम्बा चौड़ा, ठीक चौकोर बनेगा। फिर भी हम अपने ठहरनेके द्वीपमात्रका चित्र खींचें तो वह



एक हजार योजन मोटा और एक लाख योजन लम्बा, चौड़ा घाली के समान बनेगा।

मध्यलोक में जम्बूद्वीप, लक्षण समुद्र आदिक अमख्यात द्वीप समुद्र हैं।



सबके बीचमें जम्बूद्वीप है, जो कि एक लाख योजन। लम्बा चौड़ा गोल है, तिल पर्वत के निकट उत्तर कुच में एक रत्नमय जामुन का वृक्ष है, इस कारण इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप अनादि काल से चलता आरहा है।

जम्बूद्वीप में हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रक्षसी और शिखरी ये छह पर्वत पूर्ण पश्चिम की ओर लम्बे पड़े हुए हैं, जिनसे जम्बूद्वीपके सात सड़क हो जाते हैं। उन्हीं सात सड़कों की भरत, हैमवत, हरि, त्रिवेह, रम्यक, हैरण्यवत और पंराजत, इन सात क्षेत्ररूप रचना हो रही है।

दक्षिण दिशा की ओर जिस भरत में हम और आप रहते हैं उसकी आयुति घणुपकी सी है। भरतक्षेत्रके ठीक बीच में पचास योजन चौड़ा पचीस योजन ऊँचा और पूर्ण पश्चिम कुट्ट अधिक दस हजार योजन लम्बा विजयार्थ पर्वत पहाड़ हुआ है।

भरत से घुपटा हुआ २०५२ दस सौ घायन योजन चौड़ा कुट्ट अधिक चौबीस हजार योजन लम्बा तथा सौ योजन ऊँचा हिमवान् पर्वत है। हिमवान् पर्वत के ऊपर एक हजार योजन लम्बा, पाँच सौ योजन चौड़ा, दस योजन गहरा पथ नामका सरोवर है।

उसमें से (महा) गङ्गा और (महा) सिन्धु नाम की नदियाँ निकलती हैं। आज कल पञ्जाब में बहाल तब बहने वाली शुद्ध गङ्गा और सिन्धुओं से ये नदियाँ बहती हैं। दोनों नदियाँ उत्तर भरतक्षेत्र में बहती हैं, विजयार्थ पर्वत की

गुलाबों में से निकल कर दक्षिण भारत में यह फल लरण-  
समुद्र में मिल जाती हैं ।

इस प्रकार से भारतक्षेत्र के छह खण्ड हो जाते हैं ।  
छह खण्डों के अधिपति को चक्रवर्ती कहते हैं । इन छह  
खण्डों में लरण समुद्र की ओर के खण्ड को आर्य खण्ड  
कहते हैं । हमलोग आर्य खण्ड में निवास करते हैं ।  
आनन्द देखे जा रहे यूरोप, अमरीका आदि देश सब  
इस आर्य खण्ड के भीतर ही हैं । दोष पाँच खण्ड खोज  
खण्ड कहे जाते हैं ।

जम्बूद्वीपके ठीक बीच में एक लाख चालीस हजार योजन  
चौड़ा और भूमि में दश हजार योजन चौड़ा क्रम से घटता  
हुआ ऊपर एक हजार योजन चौड़ा सुमेरु पर्वत है ।

इस पर्वतके ऊपर पाण्डुक वनमें तीर्थङ्करका जन्मभियेक  
उत्सव मनाया जाता है । जम्बूद्वीपके चारों ओर दो लाख  
योजन चौड़ा लरण समुद्र फैला हुआ है । लरण समुद्रके  
चारों तरफ चार लाख योजन चौड़ा घातनी खण्डद्वीप है ।  
इस द्वीपमें पूर्व पश्चिम दिशामें दो मेरुपर्वत हैं । जम्बूद्वीपसे  
दूरी रचना है । वातकीखण्डको सब ओर घेरकर आठ  
लाख योजन चौड़ा कालोदधि समुद्र व्यनम्बित है । इसके  
चारों ओर घेरे हुये सोलह लाख योजन चौड़ा पुष्कर  
द्वीप है । इसके ठीक बीचमें मानुपोत्तर पर्वत पड़ा हुआ  
है, मनुष्य इसके याहर नहीं जा सकते हैं । इस कारण  
इसकी मानुपोत्तर सभा है । मानुपोत्तरके पहिले आठ लाख

याजन चाटे पुष्करार्धद्वीपमें दो मेरु हैं। मेरुओंके दोने-  
 ओर क्षेत्र और पर्वतोंमें जम्बूद्वीपकीमी रचना है। इन  
 ढाई द्वीपोंमें पाच भरत, पाच ऐरावत, और पाच विदेह  
 इस तरह पन्द्रह कर्मभूमियाँ हैं। यहींसे मनुष्य समयको  
 धारणकर मुक्ति लाभ करते हैं। जेप स्थानोपर भोग  
 भूमियाँ हैं।

ढाईद्वीपसे आगे असर्यात द्वीप समुद्रोंमें व्यतरदेव  
 और त्रियञ्जजीव निवास करते हैं। हाँ अतिम आधे द्वीप  
 और पूर समुद्र तथा धारा केनोमें कर्मभूमिकी रचना है।

यहाँ समतल पृथ्वीसे सान सौ नव याजन चलकर  
 तारे हैं। तारासे दश याजन चलकर सूर्य है। सूर्यसे  
 अस्सी याजन ऊपर चन्द्रविमान चलते हैं। इस प्रकार  
 एक सौ दश याजन मोटे और असर्यात याजन लम्बे चाडे  
 आकाशमें यह जातिष्क मंडल है। ढाई द्वीपमें ये सुदर्शन  
 मेरुकी प्रदक्षिणा करते रहते हैं। इनके बाहर जहाँके  
 तहाँ स्थित हैं। दृष्टे जाने वाले सूर्य, चन्द्रमा और तारे  
 ये सब विमान हैं। इनके ऊपर महल गये हैं, उन एक  
 एकमें सैकड़ों हजारों, जातिष्क देव निवास करते हैं। सूर्य या  
 चन्द्रविमान अनेक हैं। जम्बूद्वीपमें दो सूर्य और दो चन्द्रमा हैं।  
 आजका सूर्य पल विदेह क्षेत्रमें घूमता हुआ परसे। पुनः यहाँ  
 आकर प्रकाश करेगा। सुदर्शनमेरुके ऊपर कुछ कम सात  
 राजतक ऊर्ध्वलोक है। यहाँ वैमानिक देव निवास करते  
 हैं ऊर्ध्वलाकमें सबसे ऊँचे तनुनात-बलयके अंतमें

विरोध उपस्थित हो जाता है। जैसे—एक मनुष्य अपने पिताको पिता कहता है। यहाँ पिता कहलानवाला सभीका पिता नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वह किसीका लडका है, किसीका भानजा है, किसीका मामा है, किसीका काका है, किसीका नाती है, किसीका याया है और किसीका कुछु है। वह अपने लडक़ी अपेक्षा पिता अग्र्य है। पिताकी अपेक्षा लडका है, मामाकी अपेक्षा भानजा है। इसी प्रकार सब समझना चाहिये।

ऐस ही ४ फुटका बँत छोटा है या बडा ? अगर ५-७ फुटका बँत सामने हो तो उनसे छोटा है और २ ३ फुटवाला बँत हा तो वह चार फुटवाला इससे बडा है। इस तरह ४ फुटका बँत छोटा भी है और बडा भी है।

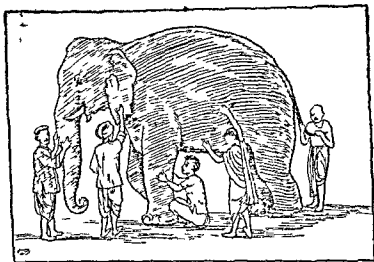
ठीक इसी तरह कोई पदार्थ किसी अपेक्षासे है और किसी अपेक्षासे 'नहीं' है। दानों धर्म एक साथ रहते हैं। इनमें अधकार और प्रकाशक समान कोई विरोध नहीं है। एक पदार्थमें अनेक धर्म रहते हैं।

पदार्थके एक अंशको जानना नय अथवा एकांत है और पदार्थके सब अंशको जानना प्रमाण अथवा अनेकान्त है। इस ही उदाहरण द्वारा स्पष्ट करत हूँ —

अन्वे पाँच खर इक ठौर। आगे गज इक आयो दोर।  
एक एक अंग सने गहा। सो सरधान जीव मे लहा ॥

सूँडि पकरि गज मूलस होय । छाज कानतें माने कोय ।  
 माना थभ पकरि गज अग । पेट पकरि चौतरा अर्भंग ॥  
 पूँड पकरि लाठी सरदहा । पाँचों ने गज भेद न लहा ।  
 भगरें लरें करैं बहु रार । समझाए सय देखनहार ॥

—कविचर धानतराय



अर्थ यह है कि पाँच अधोने हाथीका एक २ अङ्ग पकड कर हाथीने मूसल, सूप, खम्भा, चतूतरा और लाठीके समान समझ लिया और आपनमें लडने लगे । इतनेमें अखि वाला एक आदमी आया और उनके आपसमें लडने छगडनेका कारण समझ कर वाला कि मुनो, जिसने सूँड पकडी हे, वह हाथीके कान, पेट, पाँव और पूँड पकड कर

देखे और जिसने कान पकड़ा है वह सूँड, पेट, पाँव और पूँछ पकड़े। इस तरह पाँचिने जर पाँचो अङ्ग पकड़ लिये तब उन्हें आपसमें झगड़नेका बड़ा दुःख हुआ और फिर मालूम हुआ कि हम पाँचो ठीक कहते थे लेकिन और चारोंकी भी यात ठीक थी। एक दूसरे की यात न सुननेसे ही झगडा हुआ।

इसी प्रकार जैनसिद्धांत पदार्थमें अनेक धर्मोंको मानता है। इसे ही स्याद्वाद कहने हैं।

इस स्याद्वाद सिद्धांतपर सप्तारकोसमस्त निष्पक्ष विद्वान् मोहित हैं।

#### प्रश्न

- १ स्याद्वादका क्या अर्थ है ?
- २ स्याद्वादके क्या अंग हैं ?
- ३ स्याद्वादके दो तीन उदाहरण देकर समझाओ।

### पन्द्रहवाँ पाठ

#### कर्म ( अ )

#### चार घातिपा कर्म

सप्तारमें प्राणोमात्र सुखकी खोजमें रहता है। कोई भी नहीं चाहता है कि मुझे किसी प्रकारका कष्ट हो। कोई मानी है, कोई भूख है। कोई सुखी है, कोई दुःखी है। कोई खरिग्रयान् है, कोई ब्रष्ट है। कोई मनुष्य है, कोई

पशु है। कोई सुडौल है, कोई काना कून्डा है। कोई धनी है, कोई दरिद्री है और कोई राजा है, कोई महतर है।

जब एक वक्षामें २५ विद्यार्थी पढ़ते हैं तो उनमें कोई विद्यार्थी एक दो बार समझाने पर कोई पाठ अच्छी तरह समझ लेता है और किसीको कई बार समझाने पर भी समझमें नहीं आता। एक तो अच्छे नम्बरोमें पास हो जाता है और एक पास नहीं हो पाता। सब बराबर पढ़ते हैं, परिश्रम करते हैं फिर भी ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाना कर्मके आधीन है। इसी प्रकार एक मजदूर १६ घण्टे परिश्रम कर चार आना रोज भी नहीं कमा पाता और एक कुर्सापर कुछ घंटे बैठे बैठे (१००) २००) ४० महीना पैदा कर लेता है। यह भां कर्मक आधीन है। इसलिये कर्म किसे कहते हैं और उसके मुख्य भेद कितने हैं? यह सरलतास यहाँ समझाते हैं।\*

कर्म—जो पुद्गल, आत्माके मूल स्वभावके प्रकट नहीं होने देता है उसे कर्म कहते हैं। जिस प्रकार वादलोके कारण सूर्यका प्रकाश रुक जाता है उसी प्रकार क्रोध आदि कषायोंके कारण, लोभाकाशमें फैले हुए पुद्गल परमाणु आत्माका स्वभाव ढाक लेते हैं। इन्हीं पुद्गल परमाणुओंको कर्म कहते हैं। इन पुद्गल परमाणुओंमें कषायोंके सम्बन्धसे सुख और दुःख देनेकी शक्ति हो जाती है। ये कर्म आठ प्रकारके होते हैं

\*कर्मका



‘सुख’ आदि प्रयोंसे प्राप्त करना चाहिये।

१ ज्ञानावरण, २ दर्शनावरण, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयु, ६ नाम, ७ गोत्र और ८ अंतराय ।

इनमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय ये चार घातियाकर्म होते हैं । और वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र ये चार कर्म अघातिया होते हैं ।

१ ज्ञानावरण कर्म—जो आत्माके ज्ञान गुणको प्रफट न होने दे । इस कर्मके उद्योग प्रयत्न करने पर भी ज्ञान प्राप्त नहीं होता ।

दूसरेके पढ़नेमें बाधा डालना, किसीकी पुस्तक फाड़देना, छिपा देना, किसीको पुस्तक न दिखाना, अपने गुरु अथवा किसी विद्वान् गृहस्थकी निन्दा करना, अपने ज्ञानका गव करना, पढ़नेमें आलस करना, सच्चे उपदेशमें दाप लगाना, दूसरोंको सत्य उपदेश देने और सुननेसे रोकना, और यह पढ़कर मेरे परापर हो जावेगा, इस भावसे नहीं पढ़ाना इत्यादि कार्योंसे ज्ञानावरण कर्मका बन्ध होता है । जैसे जैसे ज्ञानावरण कर्म दूर होता जावेगा वैसे वैसे ज्ञान चमकता जावेगा ।

२ दर्शनावरण कर्म—जो आत्माके दर्शन गुणको प्रफट न होने दे । जैसे एक राजाका पहरेदार (चोफीदार) पहरे पर बैठा हुआ, है, वह किसीको भी भीतर जाकर राजाके दर्शन नहीं करने देता । इसी प्रकार दर्शनावरण कर्म आत्मामें दर्शन गुण नहीं प्रफट होने देता । जैसे भगवानदास भगवान्के दर्शन करने गये लेकिन मन्दिरका



ताला लगा पाया । इससे भगवानदासको दर्शनावरण कर्मका उदय समझना चाहिये । किसीको देखने न देना, देखी हुई वस्तु दूसरेको न दिखाना, अपनी दृष्टिका अभिमान करना, दिनमें सोना, मत्सर बुद्धिसे अपने पासकी चीज नहां दिखाना, किसीकी आँख फोडना और किसीका चश्मा फोड देना इत्यादि कार्योंसे दर्शनावरण कर्मका बन्ध हाता है । इसीलिये आत्माका दशन गुण प्रकट नहीं हान पाता ।

४ मोहनीय कर्म—जो आत्मा के सम्यक्त्व और चारित्र गुण का घाते । इस कर्म के उदय से जीव अपना स्वरूप भूलकर दुस्चरो के पदार्थ अपने समझने लगता है । जैसे शराय पीने वाले को अपने भले या बुरे का ज्ञान नहीं होता वैसे ही मोहनीय कर्म से जीव को अपनी भलाई या बुराई का कुछ भी ज्ञान नहीं होता है ।

क्रोध, मान, माया, लोभ, राग और द्वेष ये सब मोहनीय कर्म के उदय से होते हैं । वीरेन्द्र ने क्रोध में आकर किसी का पीट दिया और रमेशचन्द्र ने लोभ में आकर किसी के रुपये चुरा लिये । इनको मोहनीय कर्म का उदय समझना चाहिये ।

सच्चे देव, शास्त्र और गुरुपर दोष लगाना, मिथ्या देव, शास्त्र और गुरुभोकी पूजा वगैरह करना, पाँचों इन्द्रियोंके विषयोंमें आनन्द मानना आदिसे मोहनीय कर्मका बन्ध होता है ।

यह फल दो प्रकारका है :—दर्शनमोहनीय और चारित्र-  
मोहनीय ।

दर्शनमोहनीयकर्मसे आत्माके सम्यक्त्व गुणमा घात  
होता है । इससे यथार्थ तत्वापर वृद्धा नहीं हो पाती ।  
इस ही दर्शनमोहनीय कहते हैं ।



चारित्रमोहनीयकर्मसे आत्माके चारित्रगुणमा घात होता  
है । इसके उदयस जोय, धायक और मुनिका चारित्र नहीं  
धारण कर सकता, क्रोध आदि कपायोमें फँसा रहता है ।

दर्शनमोहनीय कर्मके मिथ्यात्व सम्यक्<sup>रू</sup>मिथ्यात्व और  
सम्यक्प्रवृत्ति ये तीन और चारित्रमोहनीय कर्मके ६ कपाय  
और १६ कपाय इस प्रकार सब २२ भेद मोहनीयकर्मके होते हैं ।

मोहनीयकर्म बड़ा बलवान् होता है। इसपर विजय प्राप्त करना प्रत्येक जीवका कर्त्तव्य है। जो इसे जीत ले वही सच्चा जीर कहलाता है।

८ अन्तराय कर्म—के उदयसे किसी जीवके फायरमें अन्तराय (विघ्न) आ जाता है।

जैसे एक भिखारी, राजासे भीख माँगता है और मुनीम या सज्जानची उसे न देनेके लिये वहानावाजी करने लगे, जिससे राजाकी आज्ञा मिलनेपर भी भिखारीको भीख (अन्न, वस्त्र रुपया आदि) नहीं मिल सकी। यहाँ मुनीम भिखारी की भीखमें विघ्न रूप हो गये। ऐसे ही कोई बालक आम या पूरी वगैरह खाता हो और चील या कौचा हुडा ले जाये तो समझना चाहिये कि उसके अन्तराय कर्मका उदय है।

अन्तरायके पाँच भेद होते हैं—दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य।

इनके उदयसे कोई जीव दान [आहार, ज्ञान, (उपकरण) औषधि और अभय (वसतिष्ठा)] नहीं कर पाता, अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त नहीं कर सकता, उत्तम पदार्थोंका भोग और उपभोग नहीं कर सकता और अपने शरीरमें सामर्थ्य (बल) नहीं प्राप्त कर सकता।

इसलिये किसीके दान करते, किसीको पढ़ते, रुपया या नौकरी चाकरीका लाभ होते, धर्म करते, दूसरोको भोग (घर २ काममें आने योग्य वस्त्र, सचारी आदि) प्राप्त करते अथवा उपभोग (भोजन आदि पक्षर काममें आने योग्य)

पदार्थोंके मिलते समय अपने आपको विन्न अधवा अतराय रूप नहीं होना चाहिये । नहीं तो अतराय फर्मका बंध होता है ।

सारे ३५७ व लक्ष्यके सुमेरु से

## सोलहवाँ पाठ जैनधर्म और विज्ञान

( ले०—प० सुमेरुचन्द्रजी दिवाकर, -यायतीथ,  
पी० ए०, एल० एल० पी० )

आजकल दुनियामें विज्ञानका नाम बहुत सुना जाता है । उसने ही धर्मके नामपर प्रचलित गहुनसे ढोंगोकी फलाई खोली है । इस कारण अनेक धर्म यह घोषित करते हैं, कि धर्म और विज्ञानमें जबरदस्त विरोध है । जैनधर्म वस्तु स्वभाव रूप है इससे यह विज्ञानकी खोजका स्वागत करता है, क्योंकि सर्वत्र योतराग और हितोपदेशी जिनेद्र भगवान्के द्वारा निरूपण किये गये तत्वोंमें ऐसी बात नहीं है, जिसके विरोधमें विज्ञानकी आवाज उठ सके ।

यद्यपि विज्ञानन अभी पूर्णता प्राप्त नहीं की है, फिर भी उसकी खोजोंने जैनाचार्योंके कथनकी अनेक विषयोंमें प्रामाणिकता प्रकट की है । भारतवर्षके गहुनसे वाशनिफ शब्द (Sound) को आकाशका गुण बनात थे और उस अमूर्तिक बतार अनेक युक्तियान् जाल फैलाया करते थे, किन्तु जैनधर्माचार्योंने शब्दको जड़ तथा मूर्तिमान् बतया

या, आज विज्ञानने ग्रामोफोन, (Gramophone) रेडियो (Radio) आदि ध्वनिसम्बन्धी यंत्रोंके आधारपर उस घड़को जैनधर्मके समान प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया ।

न्याय और वैशेषिक सिद्धान्तकार पृथ्वी, जल, वायु आदिके स्वतंत्र तत्व बताते हैं किन्तु जैनाचार्योंने एक पुद्गल नामका तत्व बताया इनको उसकी अवस्था विशेष बताया है । विज्ञानने हाइड्रोजिन आक्सीजन (hydrogen oxygen) नामक वायुओंका उचित मात्रामें मेलकर जल बनाया, और जलका पृथक्करण करके उपरोक्त हवाओंको स्पष्ट कर दिया । इसीप्रकार पृथ्वी पर्यायधारी अनेक पदार्थोंको जल और वायु रूप अवस्थामें पहुँचाकर यह प्रता दिया कि वास्तवमें स्वतंत्र तत्व नहीं हैं किन्तु पुद्गल (matter) की विशेष अवस्थाएँ हैं ।

आज हजारों मील दूरीसे शब्दोंमें हमारे पासतक पहुँचानेमें मध्यम (medium) रूपसे 'ईश्वर' नामके अदृश्य तत्त्वाकी वैज्ञानिकोंके कल्पना करनी पड़ी, किन्तु जनाचार्यों ने हजारों वर्ष पूर्वस ही लोकव्यापी 'महास्व' नामक एक पदार्थके अस्तित्वको बताया है । इसकी सहायतासे ही भगवान् जिनेन्द्रके जन्मादिनी वार्ता क्षणभरमें समस्त जगत्में फैल जाती थी । प्रतीत तो ऐसा भी होता है कि नेपकम्प, वाटुस्पदन आदिके द्वारा इष्ट अष्टि घटनाओंके स्वदेश स्वतः पहुँचानेमें यही महास्व सहायता प्रदान करता है । यह व्यापक होते हुये भी सूक्ष्म बताया गया ।

जैनधर्ममें पानी छानकर पीनेकी आज्ञा है, क्योंकि इससे जलके जीवोंकी प्राण विराधना ( हिंसा ) नहीं हाने पाती । आजकल अणुवीक्षणयंत्र ( microscope ) ने यह प्रत्यक्ष दिखा दिया कि जलमें चलते फिरते छोटे २ बहुतसे जीव पाए जाते हैं । कितनी विचित्र बात है कि जिन जीवोंका पता हम अनेक यंत्रोंकी सहायतासे कठिनतापूर्वक प्राप्त करते हैं,



### विरण कर्मके पाठमं देखें

उनके हमारे आचार्य अपन अतीन्द्रिय ज्ञानक द्वारा बिना अवलम्बनके जानते थे ।

अहिंसाव्रतकी रक्षाके लिये जैनधर्ममें रात्रिभोजन त्यागकी शिक्षा दी गई है । वर्तमान विज्ञान भी यह बताता है कि सूर्यास्त होनेके बाद बहुतसे सूक्ष्म जीव उत्पन्न

हाकर विचरण करने लगते हैं, अतः दिनका भोजन करना बेहतर है। इस विषयका समर्थन वेदक ग्रन्थ भी करते हैं।

जैनधर्ममें बताया गया है कि चतुर्दशदिनें प्राण है। इसके विषयमें जेनाचार्योंने बहुत घांसीकीके साथ विवेचन किया है। स्व० विज्ञानाचार्य जगदीशचन्द्र वसु महाशयने अपने यंत्रा द्वारा यह प्रत्यक्ष सिद्धकर दिखाया, कि हमारे समान वृक्षोंमें चेतना है और वे सुख दुःखका अनुभव करते हैं।

जैनधर्मने बताया कि वस्तुका विनाश नहीं होता, उसकी अवस्थाओंमें परिवर्तन अवश्य हुआ करता है। आज विज्ञान भी इसी बातको प्रमाणित करता है कि मूल रूपस किसी वस्तुका विनाश नहीं होता, किन्तु उसकी पर्यायोंमें फेरफार होता रहता है।

जेनाचार्योंने कहा है कि प्रत्येक पदार्थमें अनंत शक्तिया मौजूद हैं। क्या आजके वैज्ञानिक एक जड़ तत्वको लहर ही अनंत चमत्कारपूर्ण चीजें नहीं दिखाते? लोगोको व अवश्य आश्चर्यमें डालने वाली हैं, किन्तु जेनाचार्य तो यही कहेंगे कि, 'अभी क्या देखा है, इस प्रकारकी शक्तियाका समुद्र हुआ पडा है।'

जैन दार्शनिकोंने बताया कि सत्य एक रूप न होकर विविध धर्मोंका पुंजरूप है। इसी जैनधर्मकी महान् विभूतिको ही अनेकान्तवादके नामस स्मरण करते हैं।

इतर धर्मोप आचार्य इसक वैय और साम्प्रदायिक सम्झनेमें सममय रह, किन्तु साइक विद्यालय वैज्ञानिक आँखानेक आँखा, साइक विद्यालय (The Science of Religion) न जैन विद्यालयका महत्ता विज्ञानक समझ पर नकल करे वी।

जैन आचार्य आचार्यमें तन्त्र पदार्थोंमें सुखता एवं अनुभवताका विस्तृत विवरण दिया है। यदि वर्तमान विज्ञान द्वारा इस विवरणका, धाराकाके साथ जोड़कर जाय ता अनेक रूप पाने प्रकाशमें आयेगा और आचार्यकी गंभीरता का पता चलेगा।

जैनमत का मत है कि ननुप्य अथवा विज्ञान सङ्ग रहकर मानसिकता कर सकता है। इसमें सांख्यिक साधना ही संयोगवियोगक द्वारा विभिन्न जगत्का प्रदर्श करता है। यह जगत् किसी अविद्यमान का नशा रचना है और इसक निरास व अर्थ व्यवस्थापनमें किमा अथवा आत्मतमस एवं योग्य आत्माका बंध हाथ है। आधुनिक विज्ञान यह बताता है कि यह जगत् पदार्थोंक भल या विस्तृतका काम है। इसमें अथ शक्ति का हस्तक्षेप मानन की कार आवश्यकता नहीं प्रतीत हाती।

जैनमतका विज्ञानस इतना अधिक सम्भव है कि जैन तथा सांख्यमें जो अर्थवैज्ञानिक पात्र पाई मिलती।

तन्त्र सूक्ष्म और गम्भीर है। साधारण मनुष्यका अनुभव परिमित हाता है, इसस कभी २ परस्पररूप की पूर्ण



तब तक न पहुँच सकनेके कारण किसी २ को यह भ्रम उत्पन्न होन लगता है कि अमुक वात जैनधर्म की विज्ञानसे नहीं मिलती। ऐसे व्यक्तियोंके लिए हमारा यह निवेदन है कि उपरोक्त कतिपय बातोंको देखकर जैनाचार्यों की गम्भीर दृष्टि तथा वैज्ञानिकताका पूर्ण पता चलता है और यह शोध उन आत्मदर्शी मुनी-टोने यत्रादि की सहायताके बिना की थी, जिससे वे महान् धानी सिद्ध होते हैं। ऐसे विज्ञानवेत्ताओंके कथनके अनुरूप यदि कोई वात समझनेमें दिक्कत हो, तो उस एकदम मिथ्या कहनेके उदलेमें उसपर फिरसे गहरा विचार करना चाहिए। वर्तमान विज्ञान अभी प्रगतिशील (Progressive) अवस्थामें है और उसमें प्रतिदिन परिवर्तन और परिवर्धन होते रहते हैं। अतएव तनिर ठहरकर दपना चाहिये, तब पता चलेगा कि ऐसी कोई भी वात जैनधर्ममें नहीं है, जिसका विरोध वास्तविक विज्ञान करता है। किसी यूरोपियन विद्वान्ने बहुत ठीक कहा है कि आधुनिक विज्ञान जैसे २ भागे बढ़ता जायगा, वैसे २ जन-तत्वों की समीचीनता प्रकाशमें आती जायगी।

अतएव विज्ञानके प्रेमियोंका कर्तव्य है, कि वे जैनधर्मके सभी प्रश्नोंका अध्ययन तथा मनन करें। इस रत्नाकरमें वैज्ञानिक तत्वोंके साथ २ जीवनमें विमल एवं सर्वोच्च सुख प्राप्त करने योग्य अमूल्य तथा अपूर्व रत्न प्राप्त होंगे।

## सत्रहवाँ पाठ उपवास

ससार में अनेक धर्म हैं। बहुत से लोग "धर्म का विषय है, समझ कर उस प्रिया का उपहास किया करते हैं और उसके लाभों से घञ्चित रहते हैं।

यहाँ यह बताने का प्रयत्न किया जायेगा कि उपवास केवल धार्मिक प्रिया ही नहीं है बरिन् स्वास्थ्य के लिये भी नितान्त उपयोगी है।



विवरण कर्मके पाठमें देखें

हिन्दू समाज में चा-द्रायण, पफादशी, प्रदोष, रविवार और मासोपवास इत्यादि का नियम है।

मुसलमानों में रमजान के दिना में तीस दिन तक रोज़ा रखने की आज़ा है।

ईसाइयों के लिये वाइविल में लेंट नामक उपवास धरताया गया है। यह चालीस दिन तक करना पडता है।

जैनियों में अष्टमी, चतुर्दशी, अष्टाह्निका और पर्युषण आदि पर्वों में यथाशक्ति एकाशन ( एक बार भोजन ) उपवास और श्लेषधोपवास करने का विधान है। इसके सिवाय जैन मुनि तो आहार की शास्त्रीयविधि न मिलने तक महीनो निराहार रहते हैं और उन्हें किसी प्रकार की मानसिक वेदना का भी अनुभव नहीं होता।

जैनियों के प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव ने लगभग एक वर्ष तक अन्तराय ( आहारकी विधि न मिलने ) आनेपर उपवास किया था।

वर्तमान में भी धर्म से प्रेरित होकर महीनो के उपवास किये जाते हैं। गुजरात में तो छोटे २ बालक और बालिकायें भी भाद्रपद शुक्लपञ्चमी को निराहार रहते ह।

राष्ट्रहित की दृष्टि से महात्मा गाँधी ने इक्कीस दिनके उपवास किये थे।

तपस्वी पं० रामचन्द्रजी शर्मा "वीर" ने देवी के सामने पशुओं की बलिदान करने की राक्षसी प्रथा बन्द करने के लिये मॉंगरोल ( हैदराबाद ) आदि में कई दिन के उपवास किये ह और कलकत्ता के काली के मन्दिर में तो एक महीने तक निराहार रहे। अनेक स्थानो पर आपको पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। जैन धर्म तो मरण समय तक भी उपवास की आज्ञा देता है।

आहार परिहाप्य क्रमशः, स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम् ।

स्निग्धं च हापयित्वा खरपानं पूरयत्क्रमशः ॥

खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्यम् ।

पञ्चनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्सर्वयत्नेन ॥

—स्वामी समतभद्राचार्य

भावार्थ यह है कि समाधिमरण करने वाला अपनी शक्तिके अनुसार आहार घटाकर नीरस पेय ग्रहण करे और उसे भी छोड़कर पञ्चपरमेष्ठीका ध्यान करते हुये शरीरका त्याग कर दे ।

अथ उपवासका सक्षेपमें लक्षण यथात है ।

चतुराहारविसर्जनमुपवासः

—स्वामी समतभद्राचार्य

अथात् अन्न—दालभात आदि, पान—पानी, शरबत, दूध आदि, साद्य—ताड़ू पडा आदि और लेह्य—रसडी आदि चारा प्रकारक भाजनका त्याग करना उपवास है । यह बारह घंटे, चौबीस घंटे और अपनी शक्तिक अनुसार अधिक समय तकक लिये किया जा सकता है ।

आजकल उपवास आदिका रूपांतर हो गया है । यह वास्तवमें आत्माका परित्र बनाने और अधिक धर्माचरण करनेके लिये किया जाता है । यह नहीं कि बल उपवास है तो आज दुना खालें । हलुधा पूड़ी और गरिष्ठ भाजन करतें । आज उपवास है तो दिनभर आलसमें पड़े रहें ।

वर्तमानमें स्वास्थ्यपर उपवासका क्या प्रभाव पडा है ? यह देखिये ।

एक समय वह था जब नीरोगताके लिये उपवास करनेकी अपेक्षा की जाती थी किन्तु स्वास्थ्यका अनुभव करने वाले आचार्यों और ग्रन्थकारोंने स्पष्ट वर्णन किया है ।

अनुधितेनाप्यमृतमुपभुक्त च भवति विपम् ।

—सोमदेवसूरि

अर्थात् भूख न लगने पर खाया हुआ अमृत भी विपके समान हाता है ।

वैद्यकके प्रसिद्ध ग्रन्थ “भावप्रकाश” में लिखा है कि घात, पित्त या कफ, किसीके विकारसे उत्पन्न होनेवाला रोग केवल उपवास से दूर किया जा सकता है । उपवासके बाद में शरीरमें स्फूर्ति आती है और जठराग्नि भी प्रदीप्त हो उठती है ।

अब वर्तमानकालमें डाक्टर और वेद्य उपवासका क्या महत्व समझते हैं ? यह आप निम्न पंक्तियोंसे सहज ही समझ सकेंगे ।

दोनो स्वीकार करते हैं कि कठिनसे कठिन बीमारियों केवल उपवाससे दूर की जा सकती हैं ।

डाक्टर वरनर मेक्फेडन प्राकृतिक चिकित्साके बड़े विद्वान् हैं । अमेरिकामें आपका College of Physiotherapy है । उसमें सभी रोगोंके प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा आराम पहुँचानेकी शिक्षा दी जाती है ।

“फिजिकल कलचर” आदि पत्रोंसे स्वास्थ्य पर प्रकाश डालते हैं और उपवास पर अधिक जोर देते हैं ।

उनका स्वयं अनुभव है कि पहिल ही पहिल उपवास करनेमें कुछ फल मालूम होता है कि तु ३४ दिन बाद भोजन करनेकी इच्छा भी नहीं होती । उपवासके दिनोंमें मानसिक परिश्रम अच्छी तरह किया जा सकता है । उपवास करनेके पहिले दूसरे दिन ढाई सेर और दूसरे दिन द्वा सेर वजन कम हो गया, इस तरह सात दिनोंमें साढ़े सात सेर वजन घट गया । इन दिनोंमें भी लम्बी दौड़ लगात ये और १००।१०० पाउंडका डबल उठाते थे । उनका कहना है कि उपवास में शारीरिक शक्तिकी कमीका खयाल करना भूल है ।

मिस हालने लकवासे आराम पानेके चालीस दिनका उपवास किया था । और उपवास के दिनोंमें ६।६ घंटे काम किया करती थीं ।

एक आदमीकी आँतमें घाव हा गया था । डाक्टरने नशतर लगाये त्रिना २।१ दिनमें मरनेका अदेशा बताया था लेकिन उसे दस दिनोंके उपवाससे ही लाभ हा गया ।

अमेरिकाके प्रसिद्ध उपन्यास लेखक मि० आष्टन सिक्लेश्वर सा० को मन्दाग्रिका रोग था । उन्हें १३।१४ दिन के उपवाससे आराम हो गया ।

इंग्लैण्डके एक साठ वर्षक मनुष्यके खूनमें यरावी हो गई थी । इस समय इसका वजन पौनेतीन मन था । पन्द्रह

दिनके उपवासके बाद उसका वजन पौने दो मन रह गया और पूर्ण स्वस्थ हो गया ।

रिचर्ड फॉसेलने तो नब्बे दिनका उपवास किया था । इन्हें जलोदर रोग हो गया था । इसके कारण इनका वजन लगभग पाँच मनके हो गया था । चलना फिरना कठिन हो गया । आप उपवासके बाद स्वस्थ हो गये ।

कुष्ठ, दमा और क्षय जैसे भयकर रोग भी उपवाससे दूर हो जाते हैं ।

इसी प्रकार भारतमें भी डाक्टर शावक वी० मदन और वंश प० रामेश्वरानन्दजा आदि अनेक उपवास चिकित्साके विप्रद्वर्द्ध हैं । जिन्होंने सैकड़ों रोगियोंको कठिनसे कठिन रोगसे मुक्त कर जीवनदान किया है । २५/३० सालके भयकर पुराने रोग भी केवल उपवाससे दूर किये जाते हैं ।

भोजनका पचना और मलका बाहर निकलना बहुत आवश्यक है । ऐसा न होनेसे ही रोग पैदा होते हैं । उपवास करनेसे दोनो शक्तियाँ बराबर काम करने लगती हैं । शरीरके भीतरका विष जब नष्ट हो जाता है तब अच्छी भूख मालूम होने लगती है ।

उपवासके बादमें इन्द्रियोंमें विशेष स्फूर्ति उत्पन्न हो जाती है । साथ ही शारीरिक व मानसिक बल उन्नत होता जाता है ।

अधिक क्या, पशु भी अस्वस्थ होनेपर खाना पीना छोड़ देते हैं ।

इस विषयकी जानकारीके लिये Fasting for Health और "उपवास चिकित्सा" आदि पुस्तकोका अध्ययन करना चाहिये ।

इसलिये उपवास अथवा नियमित भोजन करना धार्मिक स्वास्थ्यको दृष्टिसे अच्छा होनेके साथ ही राष्ट्र और समाजको परिस्थितिका धान रखने वालेके लिये भी अत्यन्त आवश्यक है ।

### प्रश्न

- १ भिन्न २ सम्प्रदायोंके उपवासाका वर्णन करो ।
- २ उपवास किसे कहते हैं ।
- ३ उपवास करनेसे क्या लाभ है ?

---

## अठारहवाँ कर्म (घ)

### चार भ्रयातियारुर्म ।

१ वेदनीयकर्म—जो कर्म जीवको सुख दुःख दे या सुख दुःखकी सामग्री जुटा दे। इस कर्मके उदयसे जीव किसी पदार्थको इष्ट और किसी पदार्थको अनिष्ट समझने लगता है और उससे सुख तथा दुःखका अनुभव करने लगता है। सुख और दुःख देना वेदनीय कर्मका ही काम है।



जैसे बलवीरसिंहने शहद लपेटी हुई तलवार चाटी । शहद चाटनेसे मोठा लगा तो मुख हुआ और तलवारसे जीभ कटने पर दु ख हुआ ।

इसलिये वेदनीय कर्म दो प्रकारका होता है—१ साता वेदनीय और २ असातावेदनीय ।

सातावेदनीयके उदयसे मुख देनेवाली सामग्री (वस्तु) मिलती है और दु ख देनेवाली वस्तु असातावेदनीयके उदयसे मिलती है ।

सब जीवों पर दयाभाव रखना, प्रेतोंका पालन करना, आहारदान, ज्ञानदान, शोधदान और अभयदान करना, क्षमा धारण करना, लोभ नहीं करना और सतोष रखना आदि कार्योंसे सातावेदनीय कर्मका बन्ध होता है ।

दु ख करना, शोक करना, पश्चात्ताप ( पछतावा ) करना, एस राना जिसे सुनकर दूसरोंका रोना आजाये और मारना-पीटना जैसी असातावेदनीय कर्मका बन्ध होता है ।

२ आयुकर्म—इस कर्मके कारण आत्मा, नरक, तिर्यञ्च, देव और मनुष्य इन चार गतियोंमें, कोई एक शरीर धारणकर अपने कर्मानुसार किसी भी गतिमें, बसा रहना पड़ता है । जैसे एक मनुष्यके पाँच काठकी पेडीमें डाल दिये जाते हैं फिर वह इधर उधर नहीं चल फिर सकता । इसी प्रकार आयुकर्मके उदयसे नियतकालतक मनुष्य आदि गतियोंमें शरीर धारण करता है । आयु जीतनेपर अपने २ कर्मोंके अनुसार नरक, तिर्यञ्च, देव अथवा मनुष्यगतिमें जन्म लेता

है। यह आयु कर्मकी पराधीनता है। किसी भी एक गतिमें रोके रखना इसका काम है।



( आरम्भ करने )

बहुत आरम्भ (सेवा, दृष्टि, व्यापार आदि) और परिग्रह (धनधान्य आदि) रखनेसे गरु आयुका वध होता है। ऐसा करनेसे जीवको नरक गतिके दुःख उठाने पड़ेंगे।

दुःख कष्ट करने, दूसरोको ठगन, दगा करने और जालसाजी आदि करनेसे तिर्यञ्च आयुका वध होता है। ऐसा करनेसे पशु, पक्षी और वृक्ष आदिका शरीर धारण करना पड़ेगा। थाडा आरम्भ और परिग्रह रखनेसे, कोमल परिणामोसे, परोपकार करने और जीवोपर दया आदि करनेसे मनुष्य आयुका वध होता है।

व्रत उपवास आदि करने, शान्तिपूर्वक भूख, प्यास आदि सहने, और सत्यधर्मका प्रचार करने एव उसकी प्रभावना करनेसे देवायुका वन्ध होता है। ऐसे कामोके करनेसे भयनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और कल्पवासी देवोंमें जन्म हाता है।

३ नामकर्म—के उदयसे अनेक प्रकारके शरीर, इन्द्रियाँ, अङ्ग (हाथ, पैर आदि) और उपाङ्ग (अंगुली आदि) आदि की रचना होती है। जैसे चित्रकार देव, नारकी, मनुष्य और तिर्यञ्च (हाथी, मछली, तोता, पेड़ आदि अनेक प्रकार) के चित्र बनाता है ठीक उसी प्रकार नामकर्म भी सुरूप (सुडाल) और कुरूप (बेडाल), छोटे, बड़े आदि अनेक प्रकारके शरीर बनाता है। यह कर्म भी दो प्रकारका है। १ शुभ नामकर्म और २ अशुभ नामकर्म।

मन, वचन और कायको सरल रखने, किसीका बुरा न विचारने, और किसीका बुरा न करने, आपसमें लड़ाई नहीं करने और धमात्मा पुरुषोको देखकर प्रसन्न होने आदि से शुभ नामकर्मका वन्ध होता है।

मन, वचन और कायमें कुटिलता करने, मिथ्यात्वी होने, घमंड करने, आपसमें लड़ने, मिथ्या देवोंकी पूजा करने, दूसरोका बुरा विचारने, दूसरोकी नकल करने, चुगली खाने और दूसरोको बिडाने, तग करने वगैरहसे अशुभनाम कर्मका वन्ध होता है।

फिसीका सिर

लम्बा व फिसीका छोट  
(चीनी लोगो जैसी) नाप  
केइ पुरपा जैसे दातयालः  
राक्षम जसा काला भयानः



विवरण फर्मके पाठम देखें  
और सुरूप हाता है। फिसीका पन्दर जैसी  
फिसीका द्य जन्मा। यह सत्र नामधर्मकी महिम

४ गोत्रकम—ऊँचे और नीचे कुलम पैदा  
जैसे कुम्भकार (कुम्हार) छोट और बड़े सत्र तर  
पनाता है ऐसे ही नामधर्म भी जीवोका उचा (बड़ा)  
नीचा (छोटा) बनाता रहता है।

इसके दो भेद होते हैं—१ उच्चगोत्र और २ नीच गोत्र ।

उच्चगोत्रकर्म—के उदयसे उत्तम आचरण करनेवाले लोकमान्य कुलमें उत्पन्न होता है ।

नीचगोत्रकर्म—के उदयसे जीव घुरे आचरण करनेवाले क्षान्तिघ कुलमें उत्पन्न होता है ।

दूसरेके गुणोकी प्रशंसा करने, अपनेसे अधिक गुणवालो का आदर करने तथा अपनी विद्या, धन और गुण आदिका मान न करने आदिसे उच्चगोत्रका रन्ध्र होता है ।

दूसरेकी निन्दा करने और अपनी प्रशंसा करने, सच्चेदेव, शाल, और गुरुका अविनय करने और अपनी जाति, कुल, विद्या, धन, शरीर और प्रभुता आदिका अभिमान करनेसे नीचगोत्रका रन्ध्र होता है ।

बालको ! कर्म की महिमा देखो । कर्म की महिमा के साथ कर्म ( पुरुषार्थ ) की महिमा का भी अनुभव करो । कर्म का अर्थ फल भाग्य और पराये भरोसे ही रहना नहीं है । कर्म का अर्थ पुरुषार्थ भी है । पुरुषार्थ का आश्रय लेकर ही इस अपार संसार समुद्र से महावीर स्वामी आदि न उद्धार पाया है । वे कर्म और आत्मा का वास्तविक स्वरूप समझ कर और कर्म को समूल नष्ट करने का अनुपम पुरुषार्थ कर, नित्य, निरञ्जन, निरन्तर तथा अनन्त ज्ञान और सुप्रफे निधान बन गये ।

- १ कर्म कितने कहते हैं ?
- २ कर्म कितने होते हैं, उनका संक्षेप में लक्षण कदो ।
- ३ कर्मों को दृष्टान्तों से स्पष्ट करो ।
- ४ कर्म में भाग्य और पुण्यार्थ को स्पष्ट करो ।
- ५ इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

## उन्नीसवाँ पाठ वीरोपदेश

[ल०—पन्नालाल 'धस त' साहित्याचार्य]

धर्म निजमी वस्तु है पर जाति भौतिक वाद ही है ।  
जातिर पीछे सताना हीनता हठवाद ही है ॥१॥  
जो घात तुमका है तुरो वह श्र यका हा क्या भती ?  
सय ज-तुआमें एक सी है आतमा नुरसे रली ॥२॥  
स्वार्थवश परका सताना धम मात्वका नहीं है ।  
तडफडाते दीन जनके ताडनेमें शिय\* नहीं है ॥३॥  
कालका परिणाम लगकर रुढ़ि मिथ्या तोड देना ।  
है बुरा बिलकुल नहीं यह कार्य करके दर लना ॥४॥  
चाहते यदि सौख्य हा तुम विभ्यकी वक्ष स्थलीपर ।  
तो घहाओ रात दिन तुम प्रेमके रमणीय निर्भर ॥५॥

सत्यकी ही रोजमें तुम जीवनी सारी बिता दो ।  
 दम्भ<sup>१</sup>को, विद्वेषको अभिमानको विलकुल हटा दो ॥६॥  
 इन्द्रियोको जीतकर तुम विश्वत्रिजयी भी कहाओ ।  
 तेज निजका प्राप्तकर फिर भीरुता मनकी भगाओ ॥७॥  
 तुच्छ सुखमें तू लुभाकर मर्त्य<sup>२</sup> भय क्यों खो रहा है ।  
 बाबले ! क्यों काच लेकर रत सच्चा खो रहा है ॥८॥  
 आज जो उन्नत बना हे वह कभी अधनत वनेगा ।  
 आज जो नीचा कहाता वह कभी ऊँचा वनेगा ॥९॥  
 क्यों बडप्पनका तमाशा मूढ़ ! तू जगमें लगाता ?  
 क्यों बुरेको तू बुरा कह द्वेष मनका है जगाता ॥१०॥  
 आदि दे उपदेश जगको वीरवर ! तुमने जगाया ।  
 भूमिको क्षण पृथ्वी में स्वर्ग सा तुमने बनाया ॥११॥

### प्रश्न

- १ धर्म क्या है ?
- २ संसारका सुख कैसा है ?
- ३ महावीरस्वामीने क्या उपदेश दिया ?

१ जड़पाद । २ कल्याण । ३ आदम्बर । ४ मनुष्यजन्म ।

- १ कर्म किसे कहते हैं ?
- २ कर्म कितने होते हैं, उनका संक्षेप में लक्षण कहा ।
- ३ कर्मों को दृष्टान्तों से स्पष्ट करो ।
- ४ कर्म में भाग्य और पुरुषार्थ को स्पष्ट करो ।
- ५ इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

## उन्नीसवाँ पाठ

### वोरोपदेश

[ले०—पद्मलाल 'वसंत' साहित्याचार्य]

धर्म निजकी वस्तु है पर जाति भौतिक<sup>१</sup> वाद ही है ।  
जातिके पीछे सताना हीनता छठनाद ही है ॥१॥  
जो बात तुमका है पुरी वह अयको हा क्या भली ?  
सब जन्तुधामें एक सी है आत्मा सुखसे रली ॥२॥  
स्वार्थपथ परना सताना धर्म भाग्यना नहीं है ।  
तडफडाते दीन जनको ताडनेमें शिर<sup>२</sup> नहीं है ॥३॥  
कालका परिणाम लखकर रुढ़ि मिथ्या तोड देना ।  
है पुरा यिलकुल नहीं यह कार्य करके दख लना ॥४॥  
चाहते यदि सौख्य हा तुम वि/वकी वक्ष स्थलीपर ।  
तो घहाथो रात दिन तुम प्रेमके रमणीय निर्भर ॥५॥



मानकचन्द्र जी उड़ेसरीय —द्वारों को इनसे विशेष  
। ह सकगा, पसा मेरा विश्वास है ।

ग० वि० जैन परिषद् परीक्षा बोर्ड के सेक्रेटरी  
उद्देशनी —आपका परिश्रम सराहनीय है ।

न्यायमूरि प० जीम्वर जी न्यायतीय इन्दौर —य  
को मत इतने अधिक उपयोगी है कि इन्हीं पुस्तकों द्वारा  
। शत वर्षों को धार्मिक शिक्षण हुआ ।

सिद्धान्त शास्त्री प० दयाचन्द्र जी न्यायतीय प्रधाना  
शक र साहित्याचार्य प० पन्नालाल जी "वसत" साहित्या  
। स मु पाठशाला, सागर—आज्ञा है कि इनसे अजन  
। का कठिनाइयों दूर हर्गो ।

श्री दशमधलाल जी स मनी परिवार महामभा र  
। स मु जैन महिला म, कन्याशाला आदि—सभी प्रान्तों म  
। का पुस्तक पाठ्य पुस्तकों का स्थान लिये गिना नहीं रहगा ।  
। गनाय अपने आधीन शिक्षा सस्थाओं म प्रचलित करने  
। त है ।

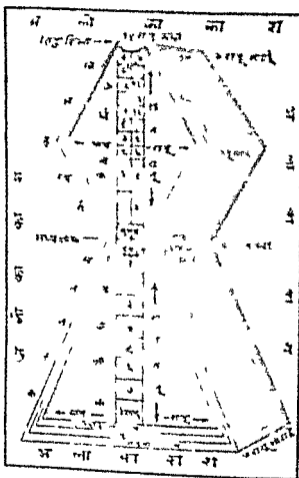
श्री जगद्विपसहाय जी पल पल श्री वकील हाइकोर्ट  
। का स सरनज सांभिक सवावसिद्धि—वृत्तिके अनुवाद—  
। का का इरागत निहायत सरल शब्दों मे लिखी है । नश  
। कर विषय रूप म कठिन विषयों का समझाया गया है । पुस्तक  
। म सूर्ला म पढ़ाने योग्य है ।

साहित्यरत्न, शास्त्री प० हीरालाल जी "मंशज"  
। का स—इन स वच्चों को ज्ञान प्राप्त करने म बड़ा सरलता  
। का मश मश रड़े प्रेम से पढ़ग ।

साहित्यरत्न यादु फूजचन्द्र जी वकील—वच्चों का धार्मिक  
। का धार्मिक शिक्षा के लिये य पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है ।

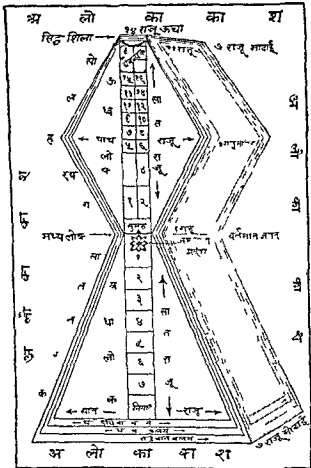
सामी कर्मानन्द जी जैन—जन समाज म गलोंपयोगी  
। का स का आवश्यकता की पूर्ति इन पुस्तकों ने कर दी है ।  
। इन पुस्तकों द्वारा सागर म सागर भर दिया गया है ।

१५५ एक का विषय  
 हा का नमः । कर्णक कर्णक मे इति



श्रीदह रात्रु उत्तम नमः, लोक पुरष संगत ।  
 तामे जीव आदिते, भ्रमता हे पिता माता ॥—भूषणराज ।

तीनलाफ का चित्र  
इसका वणत तीनलाक के पाठ म देखिये



षोडह राजु उत्तंग नभ, लोक पुरष संठान ।  
तामें जीव अनादितै, भरमत हे विग ज्ञान ॥—भूधरदास ।

० अमोलकचन्द्र जी उड़ेसरीय — श्रार्ता को इनसे विशेष  
पोध हो सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

भा० टि० जेन परिषद् परीक्षा गोंड के मेन्ट्रेटरी  
॥स्टर उग्रसेनजी — आपका परिश्रम सराहनीय है।

न्यायमूर्ति प० जीनर जी न्यायतीथ इन्दौर — ये  
चारों नाम इनने अधिक उपयोगी है कि इन्हीं पुस्तकों द्वारा  
म अपने श्रार्ता को धार्मिक शिक्षण दूंगा।

मिडान्त शास्त्री प० दयाचन्द्र जी न्यायतीथ प्रधान  
यापर व साहित्याचार्य प० पन्नालाल जी “ प्रसन्न ” साहित्या  
यापर, म सु पाठशाला, सागर—आशा है कि इनसे अजेन  
श्रार्ता की कठिनाइयाँ दूर होंगी।

शशु दशरथलाल जी स मनी पर्यार महामभा व  
मशा गु जेन महिलाश्रम, रन्याशाला आदि—सभा प्राती म  
आपका पुस्तके पाठ्य पुस्तकों का स्थान लिये जिना नहीं रहगी।  
म श्रानीय अपने आधीन शिक्षा समथाओं मे प्रचलित करने  
शाला है।

शशु जगन्पमहाय जी एत एत बी वकील हाइकोट  
मुमिक व सरजज सात्रि-सराथसिद्धि—वृत्तिके अनुवादक—  
पुस्तकों की इरारत निहायन सरज शर्ता मे लिखी है। नरुणे  
ररु विशय रूप म कठिन श्रियों को समझाया गया है। पुस्तके  
भिर २ स्कूलों म पढ़ाने योग्य है।

साहित्यरत्न, शास्त्री प० हीरालाल जी “ कौशल ”  
न्यायतीथ — इन मे वन्चों को ज्ञान प्राप्त करने मे बडी सरजता  
हागी तथा ररु प्रेम मे पढ़ेंग।

साहित्यरत्न शशु फूजचन्द्र जी वकील—वन्चों की धार्मिक  
प्राग्भिक शिक्षा के लिये ये पुस्तके अत्यन्त उपयोगी है।

श्रामी र्मर्मानन्द जी जेन—जेन समाज मे बालोपयोगी  
साहित्य की आवश्यकता की पूर्ति इन पुस्तकों ने ररु दी है।  
इन पुस्तकों द्वारा सागर म सागर भर दिया गया है।

सा विद्या या विमुक्तये  
आदर्श साहित्य संसद